संजय की कलम से ..

ईर्ष्या न करें

कुछ व्यक्ति हमसे आगे होते हैं। वो जिन जिज्ञासुओं को समझायेंगे, वे अच्छी रीति समझेंगे। उनको ज्ञान स्पष्ट करने का तरीका आता होगा। तर्क-वितर्क उनके अच्छे होंगे। स्मरण शक्ति तेज़ होगी। उनकी बुद्धि में ऐसी विशालता होगी कि जो भी कोई प्रश्न पूछेगा, उसके लिए सही उत्तर फट से ख्याल में आयेगा। अगर उनसे हम ईर्ष्या करने लगे तो उनके प्रति हमारा व्यवहार बदलता जायेगा। आपस में अनबन होगी। एक ही स्थान पर रहते हुए, एक ही दफ़्तर में काम करते हुए भी दुश्मन जैसे रहने लगेंगे। इसका मूल कारण ईर्ष्या ही है। उसकी अच्छाई की भेंट में हमारी कमी हमें नोचती रहती है। हम अपने आप से असंतुष्ट रहते हैं। आपने एक बिल्ली की कहानी सुनी होगी।

एक बिल्ली नाराज़ थी। उसको दूध नहीं मिला पीने को। घर के बच्चों ने उसको एक डंडा भी मार दिया तो वह नाराज़ हो गई कि यह क्या बात है! इतने दिनों से मैं यहाँ रह रही हूँ, मुझे आज दूध भी नहीं दिया और ऊपर से डंडा भी मारा! और तो कुछ कर नहीं पाई। मालिक और मालिक के बच्चों पर हमला नहीं कर सकती थी। वहाँ एक खम्भा था, उस खम्भे को ही नाखूनों से नोचने लगी। ईर्ष्या से व्यक्ति अंदर से जलता है, सड़ता है, कारण है स्वयं से असंतुष्टता।

अत: ज्ञान में जो हमारे से आगे हैं, उनसे प्रेरणा लो। काम करने में हमारे से कुशल हैं, तो उनसे सीख लो। उनसे पूछो कि आप ज्ञान कैसे समझाते हो, इतने अच्छे काम कैसे करते हो? उनसे प्रेरणा लो, ईर्ष्या मत करो। अगर ईर्ष्या करेंगे तो हमारे पास जो ज्ञान है, जो कुशलता और योग्यता है वह भी भूलती जायेगी। ईर्ष्या भी अग्नि के समान है। वो ज्ञान के घास को और ही आग लगाकर जला देगी। कुछ बाकी रहेगा नहीं। उसके बदले खुश रहो कि देखो, बाबा ने इनको वरदान दिया हुआ है। यह इनके पूर्वजन्म में किये हुए कर्म का फल है या इनका पुरुषार्थ है या बाबा की देन है। यह बहुत अच्छी बात है, इनमें ख़ूबी है। उनकी विशेषताओं और योग्यताओं को समझने की कोशिश करो। इस प्रकार, जो गुण हैं, उनकी प्रशंसा करो। प्रेरणा लो, ईर्ष्या मत करो। ईर्ष्या करेंगे तो नाम भी ख़राब होगा और अपनी गिरावट भी होगी।

किसी अच्छी चीज़ में कंकड़ या मक्खी पड़ जाये तो, भले ही वह कितने भी पैसे खर्च करके बनवाई गई हो, खाने योग्य नहीं रहेगी। आप उसको फेंक देंगे। ऐसे ही अलौकिक जीवन में अगर आपके विचारों में ऐसी ईर्ष्या आ गई तो निश्चित रूप से आप आगे नहीं बढ़ पायेंगे। इसलिए जिनसे भी हमारा संबंध-संपर्क है, जिनसे हमारा काम पड़ता है उन सबसे अगर हम प्रेम-प्यार से, मित्रता से, कल्याणकारी और शुभ भाव से, मधुरता और नम्रता से व्यवहार करते हैं तो हमारा मन अच्छा रहेगा और योग भी अच्छा लगेगा। ❖

अमृत-सूची

- निराकारी, निर्विकारी, निरहंकारी बनिए *(सम्पादकीय)*..... 2
- मीठी मम्मा *(कविता)*..... 4
- पुरुषोत्तम संगमयुग और.....5
- 'पत्र' संपादक के नाम..... 8
- सुन्दरता के स्त्रोत हैं परमेश्वर.. 8
- पुराना कुछ भी अंदर न रहे.... 9
- आवश्यक सूचना.....10
- मम्मा गुणों की खान थीं.....11
- जीभ प्रबंधन.....15
- जीवन जीने का ढंग.....17
- माँ, तेरे लिए मैं हूँ ना.. 18
- जो डर गया वो मर गया.....20
- सहृदयता व मिठास से भरपूर दादी मनोहर इन्द्रा जी.....21
- कैसे बनें ब्रह्मा बाप समान.....22
- शिव का अवतार देखा है *(कविता)* 24
- भक्त से ज्ञानी बनने का..... 25
- अपने आँचल में...*(कविता)* .26
- ईश्वरीय दूत थी निर्मला बहन 27
- व्यंग भरी बातें.....27
- सचित्र सेवा समाचार 28
- रिश्तों की गरिमा.....30

✍ सम्पादकीय

निराकारी, निर्विकारी, निरहंकारी बनिए

मई माह में लोकसभा चुनावों के लिए जब हमने मतदान किया तो निमित्त सरकारी कर्मचारी ने हाथ की उंगली पर नीला निशान लगाया, इस बात को प्रमाणित करने के लिए कि हम मतदान कर चुके हैं। दूसरे शब्दों में, मतदान रूपी कर्म का चिन्ह हमारे हाथ पर लग गया जो कुछ दिन तक तो रहा, फिर हाथ धुलाई होते-होते मद्धम पड़ते-पड़ते आखिर मिट गया।

आत्मा पर लगते हैं कर्मों के निशान

कर्मों की गहन गति के अनुसार भी, जब हम कोई भी कर्म करते हैं तो आत्मा पर सूक्ष्म निशान पड़ जाता है, जो इस बात को प्रमाणित करता है कि हमने वो कर्म किया है। जैसे मोबाइल की छोटी-सी चिप में बहुत सारी जानकारियाँ स्टोर हो जाती हैं, इसी प्रकार, छोटी-सी आत्मा में, अपने द्वारा किए गए सर्व कर्मों की रेखायें निर्मित रहती हैं, जो बिना फल (अच्छा या बुरा) दिए मिटती नहीं हैं। इस संबंध में कोई गलती हो नहीं सकती क्योंकि आत्मा में एकत्रित कर्म के प्रमाणों को किसी बाह्य हस्तक्षेप से मिटाया या लिखा नहीं जा सकता। अदालत की सज़ा में गवाहों के अभाव में निर्दोष को सज़ा और दोषी को मुक्ति जैसे प्रकरण हो सकते हैं परन्तु जिन कर्मों के रिकार्ड हमारे अंदर स्वत: बनते जाते हैं, उनका निस्तारण तो पाप या पुण्य झेलने के बाद ही हो सकता है। आत्मा अति सूक्ष्म है, इतनी सूक्ष्म कि स्थूल आँखों से दिखने की बात छोड़िये, सूक्ष्मदर्शी आदि यंत्रों से भी देखी नहीं जा सकती। जब आत्मा को ही नहीं देखा जा सकता तो उस पर पड़े निशानों को देखना तो बहुत दूर की बात है परन्तु कर्म के निशान के लगने और मिटने का अनुभव किया जा सकता है।

निशान मिटाने के तीन तरीके

मान लीजिए, किसी बहुत नेक आत्मा के मुख से कटु वचन निकल गया। बात पूरी हो जाने पर भी उसका चिन्तन चल रहा है कि मुझे ऐसा नहीं बोलना चाहिए था। यह चिन्तन सिद्ध करता है कि आत्मा पर बोले गए शब्दों का नकारात्मक निशान लगा है जो बार-बार चिन्तन में आकर अपना प्रभाव दिखा रहा है। हो सकता है, सुनने वाले व्यक्ति ने उसे भुला भी दिया हो, सहन कर लिया हो, समा लिया हो, क्षमा भाव धारण कर लिया हो पर बोलने वाली आत्मा को अपना ही बोल कचोट रहा है। यह कचोटना तब तक चलता रहेगा, जब तक कि वह निशान (संस्कार) मद्धम न पड़ जाये। निशान के मद्धम पड़ने के तीन तरीके हैं। एक तो वह व्यक्ति तुरन्त माफी मांग ले; दूसरा, रोज़मर्रा की दिनचर्या में अन्य कर्मों के निशान लगते जाएंगे तो यह निशान पीछे चला जायेगा, दब जायेगा, मद्धम पड़ जायेगा। मिटेगा नहीं पर असर कम हो जायेगा। समय का लेप लग जाने से थोड़ा विस्मृति में चला जायेगा। एक तीसरा तरीका भी है, यदि किसी कारण से उसी व्यक्ति से माफी न मांग सकें तो किसी अन्य ज़रूरतमंद की इतनी सेवा कर दें, परोपकार कर दें ताकि उसकी दुआओं की बौछार में यह कटु बोल की आत्मग्लानि का निशान धुल जाये।

यह तो हमने छोटा-सा उदाहरण लिया परंतु लंबे जीवनकाल में आत्मा प्रतिदिन अनेकानेक कर्म करती जाती है और उनके अच्छे-बुरे प्रभावों को झेलती रहती है। खुद ही करती है, खुद ही भोगती है। शरीर द्वारा करती है और शरीर द्वारा ही भोगती है। अच्छे कर्म के जो चिन्ह लगते हैं उनके परिणामरूप उसे अच्छी महसूसता स्वत: होती है। खुशी, उमंग, आनन्द, प्रेम, पवित्रता की लहरें उसमें उठती रहती हैं और बुरे कर्म करती है तो अशान्ति, दुख, ईर्ष्या, क्रोध, घृणा आदि गंदे भाव उसे घेरे रहते हैं जिनसे जीवन भार रूप महसूस होने लगता है। जैसे कीचड़ से सनी गाड़ी बदबू के रूप में अपना

प्रभाव छोड़ती है और सेन्ट से भरी गाड़ी खुशबू के रूप में अपना प्रभाव छोड़ती है, प्रभाव दोनों का होता है। उसी प्रकार, आत्म-जगत में भी अच्छे-बुरे दोनों प्रकार के कर्मों का प्रभाव होता है।

वृत्ति है कृति का आधार

प्रश्न यह उठता है कि कर्म कौन-सा अच्छा और कौन-सा बुरा? इसका उत्तर यह है कि कर्म करते समय व्यक्ति की वृत्ति कैसी थी, उस आधार पर कर्म की श्रेष्ठता या निकृष्टता निर्धारित होती है जैसे, एक व्यक्ति भवन बना रहा था, उसके हाथ से अनायास पत्थर छुटा और रास्ते जाते राहगीर की मौत का कारण बना। न्यायाधीश ने उसे बरी किया क्योंकि वृत्ति में कोई दुर्भावना नहीं थी। एक किसान ने खेत में चोरी से फसल काटते पड़ोसी पर डंडे का मृत्युदायी प्रहार किया। किसान को पाँच साल का कारावास मिला क्योंकि छोटी-सी गलती पर क्रोध की इतनी उग्र वृत्ति असंतुलित विवेक की निशानी है। एक चोर ने चोरी करके घर के मालिक की हत्या कर दी, उसे फाँसी की सज़ा मिली क्योंकि वृत्ति पूरी तरह हिंसक और पतित थी।

सबसे बड़ा पुण्य है अपने को पवित्र बनाना

हत्या की उपरोक्त तीनों घटनायें प्रत्यक्ष हैं परन्तु तीनों के पीछे की वृत्तियाँ अलग-अलग और गुप्त हैं। फल प्रत्यक्ष घटनाओं के आधार पर नहीं, वृत्तियों के आधार पर मिलता है। व्यक्ति की वृत्ति गुप्त रहती है पर कर्म प्रत्यक्ष दिखता है। इसलिए कलियुग में, मोटे तौर पर किसी को अच्छा या बुरा कहना इतना सहज नहीं दिखता। जैसे कोई व्यक्ति दान करता है, वह दानी के रूप में प्रसिद्ध हो जाता है पर पैसे यदि शुद्ध वृत्ति से कमाये हुए नहीं हैं तो पुण्य नहीं बनता। अब यदि ऐसे दानी व्यक्ति पर कोई कष्ट आता है तो हम सोचते हैं कि देखो, भगवान भी दानियों को ही कष्ट देता है परन्तु इसमें भगवान दोषी नहीं है, हमारी पहचान का दोष है। **जैसे दीमक लकड़ी को खोखला कर देती है उसी प्रकार हमारी काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और इनके सूक्ष्म रूपों की वृत्तियाँ हमारे पुण्यों को खा-खाकर खोखला कर देती हैं।** वृत्तियों को सतोगुणी बनाए बिना, केवल दिखने भर के श्रेष्ठ कर्म ऐसे ही हैं जैसे कि हम दीमक को लकड़ी परोस रहे हैं क्योंकि ये दिखने भर के अच्छे कर्म हमारे अहंकार को अधिक बढ़ायेंगे और उसी अहंकार रूपी दीमक की भेंट चढ़ भी जायेंगे। इसलिए भगवान कहते हैं, सबसे बड़ा दान, पुण्य, परोपकार है अपने को पवित्र बनाना, निर्विकारी बनाना। जैसे गंदे हाथों से पकड़ी जाने वाली स्वच्छ चीज़ भी मैली हो जाती है, इसी प्रकार, मन में काम, क्रोध की गंदगी के रहते, ऐसे गंदे मन से जो भी कर्म किया जाता है वह स्वयं मैला और मैला परिणाम देने वाला बन जाता है। अत: पुण्यों में प्रथम पुण्य है अपने मन को निराकारी, निर्विकारी और निरहंकारी बनाना।

चाहिए मन को श्रेष्ठ दिशा

कई स्थूल कर्मों का फल तुरन्त निकलता है जैसे ब्यूटी पार्लर में गये, तुरंत सुंदर बन गये पर यह सुंदरता उतनी ही जल्दी मिट भी जाती है। पुन: सुंदर दिखने के लिए उतना ही धन, समय, शक्ति खर्च करनी पड़ती है और यह केवल चेहरे की सुंदरता है जो शरीर के रोगी होते भी मिल सकती है और बूढ़े शरीर को भी अल्पकाल के लिए चमका सकती है। परन्तु यदि निरोगी तथा अजर शरीर तथा प्रसाधनों के आधार से मुक्त, स्वाभाविक और टिकाऊ सुन्दरता चाहिए तो वह अल्पकाल में नहीं मिल सकती। उसके लिए सुदीर्घ ईश्वरीय ज्ञान-योग का पुरुषार्थ चाहिए। इस सुदीर्घ पुरुषार्थ का फल इस जन्म में ना मिलकर सतयुग-त्रेतायुग में दैवी सुन्दरता वाले दैवी शरीर के रूप में प्राप्त होता है। अत: कलियुग में यदि किसी को धन, मान, सुन्दरता जैसी प्राप्ति है भी तो उसे देख भ्रमित न हों, वह अल्पकाल की है, दिखावा भर है, एकपक्षीय है और अपने साथ कई हानिकारक प्रभाव भी लिये हुए है।

हाँ, यदि ईश्वरीय ज्ञान द्वारा मन की वृत्तियों को सतोप्रधान बना लिया जाये तो उपरोक्त प्राप्तियाँ कलियुग में भी वरदान सिद्ध हो सकती हैं क्योंकि मन को श्रेष्ठ दिशा मिलने पर धन, मान, पद, सुन्दरता, बल को भी श्रेष्ठ दिशा मिल जाती है।

अत: सारी चर्चा का सार यही है कि **मन को पारस बनाइये। अधिकतम समय मन के विचारों की ओर झाँक-झाँक कर देखने में और मन को मांजने में लगाइये। जब भी समय मिले, ज्ञान-दर्पण को उठाकर मन की सूरत को निहारिये और साफ कीजिये। कहा गया है, वृत्ति को संवारने से प्रवृत्ति स्वत: संवर जाती है। मन के विचारों में आए हिंसा, स्वार्थ, संग्रहवृत्ति, लोभवृत्ति, अहंकार, दिखावा, बल प्रदर्शन, धन प्रदर्शन, मेरा-मेरा, अधिकार भाव आदि के कूड़े-कर्कट की ओर ध्यान दीजिए। अन्तर्जगत को संवारेंगे तो बाह्य जगत संवर जायेगा परन्तु अन्तर् का विचार छोड़कर बाह्य की ओर भागने से हर उपलब्धि से हाथ धो बैठेंगे। मीठे फल खाने की इच्छा से पहले, मीठे फल वाला बीज तैयार कीजिये। श्रेष्ठ कर्मों से भरा संसार बनाने के लिए, श्रेष्ठ बीज अर्थात् महान संकल्पों से भरा मन तैयार कीजिये।**

– ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश

मीठी मम्मा

ब्रह्माकुमार ताराचन्द सैनी, तारानगर (चुरू)

ओ मीठी मम्मा, तूने कर दिया कमाल।
पद श्रेष्ठ पा लिया, बनी अनोखा मिसाल।।

खाली हाथ यज्ञ में आई, पुरुषार्थ कर छवि बनाई।
उच्च कर्मों से आगे आई, ख्याति पा मम्मा कहलाई।
माँ रूप में निमित्त बनकर रच गई यज्ञ विशाल।।
ओ मीठी मम्मा.....

जो भी तेरे सन्मुख आता, अलौकिक ही अनुभूति पाता।
प्रभु प्यार में झट खो जाता, वापस फिर जाना नहीं चाहता।
पल भर की दृष्टि से भी कर देती मस्त-निहाल।।
ओ मीठी मम्मा.....

ज्ञान-वीणा की मीठी तान से, हो जाते थे सब हैरान-से।
तेरी करनी न्यारी जहान से, अमृत बरसता था जुबान से।
बहुतों का कल्याण किया, बनाये शिव के लाल।।
ओ मीठी मम्मा.....

बाबा संग अटूट प्यार से, पुरुषार्थ की तेज़ रफ़्तार से।
त्याग, तपस्या के आधार से, फ़रिश्ता बन उड़ गई संसार से।।
परमपिता की गोदी ले ली, तोड़ा माया का जंजाल।
ओ मीठी मम्मा.....

महिमा तेरी अजब निराली, मधुबन तुम बिन खाली-खाली।
सूनी लगती डाली-डाली, जैसे उपवन हो बिन माली।।
बच्चों से क्यों दूर हुई, मन में उठता सवाल।
ओ मीठी मम्मा.....

सुन ले माँ बच्चों की पुकार, एक बार तो नयन उघार।
कब से कर रहे इन्तज़ार, फिर से आकर दे दे प्यार।।
आशा दिल में लगी हुई, आकर ले सम्भाल।
ओ मीठी मम्मा.....

पुरुषोत्तम संगमयुग और लौकिक दुनिया में काले धन की समस्या

• ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुंबई)

धन के बारे में भारत के शास्त्रों में अनेक बातें लिखी हुई हैं। कई धन को माया कहते हैं तो कई आत्मायें धन के मालिक बनके उसका सदुपयोग भी करते हैं। धन से धारणायें भी बनती हैं तो धन से अनेक प्रकार की समस्यायें भी उत्पन्न होती हैं। धन का संबंध सरकार के साथ भी है। सतयुग-त्रेतायुग में तो सरकार का इतना संबंध कर के रूप में जनता के धन के साथ नहीं था। रघुवंश आदि में लिखा है कि अगर किसी व्यक्ति के पास ज़्यादा धन इकट्ठा होता तो वह स्वेच्छा से राजकोष में जाकर जमा करा सकता था। उसी तरीके से राजा के पास भी ज़्यादा धन इकट्ठा हो जाता था तो वह ढिंढोरा पिटवा कर कहता था कि जिस को भी धन चाहिए, राजकोष से ले सकता है। इस प्रकार राजा और प्रजा का सुखद संबंध चलता था। परन्तु बाद में लोगों की नीयत में परिवर्तन हुआ और राजा की नीतियों में भी परिवर्तन हुआ। लोभ के कारण राजा एवं प्रजा दोनों – शराब, जुआ आदि का कारोबार करने लगे जिस कारण लोगों का विश्वास राजा की ईमानदारी में खत्म हो गया। आबादी भी बढ़ती गई, परिणाम रूप गरीबी का फैलाव हो गया और राज्य सरकारों को प्रजा के कल्याण के लिए धन की आवश्यकता हुई। उसी बीच पूंजीपतिवाद, जो शुरू से चलता आया था, में परिवर्तन हुआ। बीसवीं सदी में साम्यवाद और समाजवाद रूपी नई विचारधारायें समाज में प्रकट हुई। साम्यवाद में तो प्रजा के सभी धन की मालिक सरकार ही होती है, समाजवाद में सरकार ने लोगों पर कर लगाकर ज़्यादा से ज़्यादा धन इकट्ठा करके प्रजा के कल्याण के लिए इस्तेमाल करना शुरू किया।

सन् 1930 में आई बड़ी आर्थिक मंदी से छुटकारा पाने के लिए राज्य सरकारों ने प्रजा से धन लोन पर लेकर, प्रजा का कल्याण करने का कारोबार किया और कई देशों ने तो ज़्यादा नोट छाप कर भी प्रजा के कल्याण का कार्य किया।

भारत में भी पहले सरकार टैक्स थोड़ा लगाती थी परन्तु आज़ादी के बाद सरकार ने शायद साम्यवाद एवं समाजवाद की विचारधारा का समन्वय करके बहुत टैक्स लगाने शुरू किये। स्वतंत्र भारत में एक व्यक्ति को उसकी आमदनी का 97.5 प्रतिशत टैक्स राज्य सरकार को देने का कानून बनाया गया और व्यक्ति के देह त्यागने पर मृत्यु-कर के रूप में उसकी सब प्रकार की पूंजी का 85 प्रतिशत सरकार ने ले लेने का प्रबंधन किया।

ऊपर लिखे दो कानूनों के परिणामस्वरूप लोगों में डर बैठ गया, उन्होंने बहुत बड़े पैमाने पर काला बाज़ार करने का प्रयत्न किया। कानून के तौर पर सरकार ने धंधों पर अनेक प्रकार के प्रतिबंध लगा दिये। इतने तक प्रतिबंध लगाये कि एक मोटर बनाने वाली कंपनी को अपनी मोटर में 4 के बदले 6 स्क्रू लगाने हों तो भी भारत सरकार से अनुमति लेनी होती थी जिसमें एक-दो साल लग जाते थे। लाइसेन्स राज से भी भ्रष्टाचार बढ़ गया।

ईमानदारी से धंधा करने वालों के पास केवल 2½% ही बचता था। मद्रास हाईकोर्ट का एक केस है – एक व्यक्ति के शरीर छूटने के बाद मृत्यु-कर भरने के लिए जो चीज़ें बेचनी पड़ीं उस कारण उसके वारिसों को वर्से में कुछ नहीं मिला और ही ऊपर से 7 प्रतिशत टैक्स के रूप में ज़्यादा भरना पड़ा अर्थात् अगर एक व्यक्ति ने 10 लाख रुपया अपने वारिसों के लिए रखा है तो उसके मरने के बाद उसके वारिसों को 10 लाख तो नहीं मिला, और ही ऊपर से 70 हज़ार रुपये टैक्स के रूप में भरने पड़े। सरकार की इस प्रकार की खराब नीतियों के कारण लोगों ने काला बाज़ारी करना शुरू किया। तब सरकार ने जाँच करके काले धन के मालिकों को जेल की

सज़ा देना शुरू किया। तब वो काला धन भारत में रखने के बजाय उन्होंने विदेशों में रखना शुरू किया। दुनिया के कई देशों की सरकारों ने विदेश का काला धन अपने पास सुरक्षित रखने का कानून बनाया। शुरू में तो स्विट्जरलैण्ड की सरकार ने ऐसे काले धन को सुरक्षा प्रदान की, बाद में यह कारोबार और बढ़ता गया, परिणामरूप दुनिया के 52 देशों ने अपने पास विदेशियों का काला धन सुरक्षित रूप में रखने के लिए कानून बनाये।

एक अंदाज़ा है कि सिर्फ अमेरिका में इस प्रकार से स्वैच्छिक रूप से प्रतिवर्ष 1,000 बिलियन डॉलर (100 बिलियन डॉलर अर्थात् 50,000 करोड़ रुपया) टैक्स नुकसान होता है। यही परिस्थिति दुनिया के कई अन्य बड़े राष्ट्रों की भी है। काला बाज़ारी के कारण दुनिया के अनेक देशों का अरबों डॉलर का नुकसान होता है।

भारत में भी जैसे-जैसे आर्थिक समृद्धि आती गई ऐसे-ऐसे भारत से भी काला धन विदेशों के बैंकों में जमा होने लगा। आज भारत का काला धन विदेशों में कितना है उसका अंदाज़ा लगाना मुश्किल है। फिर भी ऐसा माना जाता है कि सारा काला धन भारत में वापस आ जाये तो भारत का प्रत्येक नागरिक लक्षाधिपति बन जाये और सरकार का सारा कर्ज़ा खत्म हो जाये और भारत सरकार प्रजा के कल्याण के लिए अनेक प्रकार के कार्य बड़े पैमाने पर कर सकेगी। भारत के उच्च न्यायालय में काले धन के बारे में एक याचिका के उत्तर में भारत सरकार ने यह अंदाज़ कबूल किया है कि विदेशों में भारत के नागरिकों का काला धन करीब 70 लाख करोड़ का है तथा जर्मनी के LTG से काला धन रखने वाले भारत के नागरिकों का नाम मिला है। अन्य देशों की सरकारों से अभी तक कुछ जवाब नहीं मिला है।

एक अंदाज़ा है कि विदेशों के बैंकों में सभी देशों का कुल 11 ट्रिलियन करोड़ डॉलर जमा है, आज की तारीख में (1 ट्रिलियन अर्थात् 1 लाख करोड़ डॉलर)। इंग्लैण्ड में G 20 अर्थात् 20 देशों के मुखियाओं की कॉन्फ्रेन्स में 'Organisation for economic cooperation and development' नामक संस्था के द्वारा यह रिपोर्ट रखी गई है।

काले धन की जो सुरक्षा विभिन्न देशों की सरकारें कर रही थीं उससे बचने के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा कानून बनाया गया कि उस देश की सरकार द्वारा मांगे जाने पर यह सरकार काले धन के मालिकों के नाम-पते और कितना धन जमा है वो बता देगी। संयुक्त राष्ट्र ने यह कानून 4 साल पहले बनाया था परन्तु मलेशिया, फिलीपिन्स, युरुग्वे और कोस्टरिका जैसे कई देशों ने अब तक भी इसका पालन नहीं किया है। सिंगापुर, स्विट्जरलैण्ड, बहामास, बरमूडा, ब्रिटिश वर्जिन आयरलैण्ड आदि देशों ने भी पूर्ण रूप से विदेश की सरकारों को साथ नहीं दिया है। दुनिया के कई देश ऐसे भी हैं जिन्होंने इस प्रकार की सहायता करने का वायदा तो किया है परन्तु इस धन का मोह इतना है कि करीब 37 देशों में आज तक भी काले धन का कारोबार सुचारु रूप से चल रहा है।

अमेरिका के वर्तमान राष्ट्रपति ओबामा जी ने स्विट्जरलैण्ड के एक बड़े बैंक पर कानूनी केस किया है कि आपके बैंक द्वारा हमारे देश के काले धन को जो सुरक्षा मिली है उसके द्वारा देश को प्रतिवर्ष 100 बिलियन डॉलर का नुकसान होता है। स्विट्जरलैण्ड के बैंक ने अपनी सरकार को मदद के लिए प्रार्थना-पत्र दिया परंतु स्विट्जरलैण्ड सरकार में ताकत नहीं थी कि अमेरिका के सामने अपने बैंकों की ऐसा काला धन सुरक्षित रखने में सहायता करे। इसलिए स्विट्जरलैण्ड के बैंक ने (ऐसा माना जाता है कि) अमेरिकन सरकार को दंड के रूप में 76 करोड़ डॉलर चुक्तू किया है और अमेरिकन कालाबाज़ारियों के नाम और एड्रेस अमेरिकन सरकार को दिये हैं।

यहाँ यह बात विचारणीय है कि काला धन विभिन्न देशों की सरकारें कैसे अपने पास रखती हैं। मैं जब स्विट्जरलैण्ड गया तो मैंने एक परिचित भाई के साथ वहाँ के बैंक के मैनेजर से उसकी विधि के बारे में पूछा। उसने बताया कि मुख्य तौर से तीन विधियाँ हैं। एक तो विदेश का व्यक्ति खुले आम अपना पैसा रखे, उसको चेकबुक हमारा बैंक दे सकता

है। दूसरा, झूठे नाम पर बैंक एकाउन्ट खोल कर पैसा रखकर उसका व्यवहार उस बैंक के मैनेजर के साथ गुप्त रूप में करते हैं। तीसरा, स्विट्जरलैण्ड के बैंकों में लॉकर खोलकर धन डॉलर या पाउण्ड के रूप में नकद में रखा जाता है, लॉकर किसका है उसका कोई रिकार्ड बैंक के पास नहीं होता है। जिसके पास लॉकर की चाबी होगी वो ही मालिक बनता है और वो लॉकर खोलकर धन निकाल सकता है।

मैनेजर ने मुझे बताया कि स्विट्जरलैण्ड के बैंकों में ऐसा भी कइयों का धन पड़ा हुआ है जिसे वापस लेने कोई नहीं आता है क्योंकि जिनको ऐसे काले धन की कमाई होती है उनके पास तो हमेशा वृद्धि होती रहती है। तो वो नये काले धन को रखने की चिन्ता करेगा या पुराने को मंगाने का कारोबार करेगा? इस तरह स्विट्जरलैण्ड आदि देशों के बैंकों में अरबों डॉलर जमा पड़े हुए हैं।

काले धन का निर्माण भारत जैसे देशों में समस्या है परंतु दुनिया के कई देश ऐसे हैं जहाँ काले धन और पवित्र धन में कोई अंतर नहीं है। हांगकांग और यूएई जैसे देशों में माल की खरीदी और बिक्री में ऑफिशियली गुप्त रूप में कमीशन दिया जाता है जो कानूनी है। ऐसे देश हांगकांग और दुबई के सिवाय पनामा, सेन्ट किटस, लग्जमबर्ग, सिंगापुर, स्विट्जरलैण्ड आदि-आदि है। ऐसे देशों में जो जुआ खेला जाता है वह भी संपूर्ण रूप से कानून की मर्यादा में है।

अभी भारत में जब चुनाव हो रहे थे तो कई नेताओं और स्वामियों ने 'भारत का काला धन विदेश से वापस मांगने के लिए कदम उठायेंगे', ऐसी बातें कही हैं परन्तु याद रहे कि अमेरिका, इंग्लैण्ड, चाइना आदि देशों के पास सब प्रकार की कानूनी व्यवस्था होते हुए भी वे इतने वर्षों से काले धन के निर्माताओं को पकड़ नहीं सके हैं क्योंकि बहुत करके जो धन वहाँ रखा हुआ है वो सच्चे नाम-पते पर नहीं रखा है। तो ऐसे झूठे नाम और पतेधारियों को कैसे कोई पकड़ सकता है।

भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र के नियम के मुताबिक अब तक तो विदेश में भारतीय नागरिकों के रखे हुए धन का नाम और पता नहीं मांगा है परन्तु जर्मनी के समीप एक छोटा-सा देश है जिसने 1400 नाम और पते भारत सरकार को दे दिये हैं। मालूम नहीं, उनमें सच्चे नाम कितने होंगे और झूठे नाम कितने होंगे। ऐसे झूठे नाम वालों पर सरकार कदम भी कैसे उठा सकेगी।

अब तो भारत सरकार ने आयकर बहुत कम किया हुआ है तथा मृत्यु-कर *(Estate Duty)* हटा दिया है तथा लाइसेन्स पद्धति को भी रद्द कर दिया है परन्तु लोगों को काला बाज़ार करने की जो आदत पड़ गई है, उस समस्या को कैसे कोई दूर कर सकेगा।

काले धन में भी अनेक प्रकार हैं। मुख्य प्रकार तो वो है कि जिस धन के ऊपर राज्य सरकारों को टैक्स नहीं दिया गया है। बाकी थोड़ा प्रतिशत ऐसा भी धन है जो आतंकवादियों ने इकट्ठा किया है या चोरी आदि के द्वारा इकट्ठा किया गया है परन्तु ऐसा धन ज़्यादा नहीं हो सकता। जिस रास्ते से आता है उसी से उसका व्यय भी होता है अर्थात् चोरी-जुआ आदि के द्वारा प्राप्त धन शराब आदि में व्यय हो जाता है, ज़्यादा बचत नहीं होती। ज़्यादा बचत तो व्यापार में ही होती है। अंदाज़ा है कि भारत सरकार की प्रतिवर्ष की आमदनी का 60 प्रतिशत धन कालाबाज़ारियों के पास कमाई के रूप में है। प्रापर्टीज़ के ऊपर स्टैम्प ड्यूटी के रूप में जैसे राजस्थान राज्य में 18.75 प्रतिशत टैक्स था उसको आधा करके 9 प्रतिशत किया हुआ है। ऐसी कई छूट केन्द्र और राज्य सरकारें दे रही हैं परन्तु अनुभव यही कहता है कि सरकार को काले धन की समस्या को दूर करने में सफलता नहीं मिल रही है, उसके अनेक कारण हैं। उन कारणों को मैं यहाँ नहीं लिख रहा हूँ। शिव बाबा का पवित्र धन का कारोबार है अर्थात् पवित्र धन के द्वारा ही सुख-शान्ति-आनन्द आदि की प्राप्ति हो सकती है। उसका प्रचार करने की ज़रूरत है। जब तक वृत्तियों में और विचारों में क्रांति नहीं आयेगी तब तक काले धन की समस्या को दूर करने में सफलता मिलना असंभव है। काला धन संगमयुग की समस्या नहीं है, कलियुग की समस्या है। कलियुग की समाप्ति के साथ ही काले धन की समस्या समाप्त होगी। ❖

'पत्र' संपादक के नाम

'ज्ञानामृत' के अप्रैल, 09 के अंक में ईश्वरीय ज्ञान द्वारा उन अनमोल खज़ानों का लोगों को अनुभव कराने का प्रयास किया गया है जिन पर उनका ध्यान नहीं जाता। लोग चमक-दमक एवं भौतिक सुखों के पीछे ही भागते हैं जबकि असली खज़ाना सुख, शांति, खुशी और पवित्रता है, जो हम भगवान की याद से सहज प्राप्त कर सकते हैं। वास्तव में, लोगों की आँखों पर लगी काली पट्टी को हटाने में ज्ञानामृत पत्रिका प्रेरणादायक साबित हो रही है।

– डॉ.बी.के.गुप्ता,
प्राचार्य, खैरागढ़ा (छ.ग.)

अप्रैल, 09 के अंक में 'एक घटना मेरे अलौकिक जन्म की' अनुभव पढ़ा। सच है, जिसे अपनी सच्चाई, ईमानदारी और शिव बाबा पर पूरा विश्वास है, उसको दुनिया की कोई ताकत हिला नहीं सकती। सच्चे दिल पर साहेब राज़ी है।

– ब्र.कु.विजयलक्ष्मी,
अरैया (उ.प्र.)

मार्च, 09 के अंक में महिला दिवस पर विशेष 'एक गाय और एक नारी' लेख पढ़कर मन प्रसन्न हुआ। सबको दृढ़ संकल्प करना चाहिये कि चाहे पुत्री हो या पुत्र, उसे अच्छे संस्कार दिये जाएँ, तभी वे महान बनेंगे। ऐसे लेख आप छापते रहिए। 'ज्ञानामृत' हमें अंधकार से निकाल कर सुख-शांति की ओर ले जाती है। सच्चा मार्ग, सही साधना, क्रोध पर नियंत्रण और जीवन की कला सिखाती है। 'धन्य हुआ हमारा जीवन' लेख में कुमारियों के अनुभव बहुत अच्छे लगे।

– ब्र.कु. ज्योति, हड़पसर (पूणे)

मार्च, 09 का अंक पढ़ बुद्धि अमीर हुई। यूँ तो सभी लेख नहले पर दहला हैं किंतु दो में ज़्यादा गहरे उतरा – 'आत्मा के सात मौलिक गुण' एवं 'जीवन में सच्ची शांति आत्मचिंतन द्वारा'। लेखकों को हार्दिक बधाई। आत्मा के मौलिक गुणों का प्रस्तुतीकरण अति सुंदर, सहज, रोचक व सुखद प्रतीत हुआ।

– डॉ.एस.एम.जैन, लोनी

फरवरी, 09 के अंक में प्रकाशित 'थको नहीं राजयोगियो' लेख बहुत ही प्रेरणादायक व उत्साहवर्धक है। बाबा हर रोज़ मुरली द्वारा पढ़ाते हैं कि हमें स्व-कल्याण के साथ-साथ विश्व कल्याण भी करना है इसलिए थकना नहीं है। ज्ञानामृत की ज्ञान-गंगा में रोज़ स्नान करने के लिए औरों को भी आमंत्रित करना है। ऐसे लेख इस संगमयुग में बहुत ही लाभप्रद हैं। ज्ञानामृत सच्चे मित्र का कर्त्तव्य संभाल रही है।

– ब्र.कु.सुदर्शन, नई दिल्ली

सुन्दरता के स्त्रोत हैं परमेश्वर

बाहरी सुन्दरता के लिए आज ब्यूटी पार्लरों में कितने ही रुपयों को तथा कीमती समय को पानी की तरह बहाया जा रहा है। यदि इसके समाधान की ओर शीघ्र ध्यान नहीं दिया गया तो यह हमारे धन व समय को समाप्त करने में कोई कसर नहीं छोड़ेगा। तो आइये जानें, वास्तविक सुन्दरता क्या है? जब कोई व्यक्ति जीवन में श्रेष्ठ व सुन्दर गुणों का समावेश कर रूहानी सौन्दर्य की भासना देते हुए भी नम्रता का व्यवहार करता है तब उसे ही वास्तविक सुन्दर कहा जा सकता है। इस वास्तविक सुन्दरता के स्त्रोत गुणों के दाता परमपिता परमेश्वर हैं जो वर्तमान युग में इन गुणों को बाँट रहे हैं। आवश्यकता है उनकी श्रीमत पर चलकर धन व समय को बचाने की। इसके लिए अपने मस्तिष्क में यह चित्र अंकित करें कि हम उस सर्वोच्च सत्ता (ईश्वर) के सम्मुख बैठे हैं एवं वे हम पर सत्यता, एकता, पवित्रता आदि गुणों की वर्षा कर रहे हैं। यह अभ्यास दिन में कई बार करने से हममें रूहानी, शाश्वत सुन्दरता का समावेश हो जायेगा। इसके लिए किसी तरह के कठोर परिश्रम की आवश्यकता नहीं है।

– जागृत कुमार रामटेके, राजनांदगाँव

पुराना कुछ भी अंदर न रहे

• दादी जानकी

कभी साइलेंस में जाके थोड़ा अच्छी तरह से चेक करो, क्या मेरी पूरी अनासक्त वृत्ति है? नष्टोमोहा स्थिति है? नहीं है तो फॉलो फादर। जब सब कुछ बाप के हवाले कर दिया तो सेफ्टी है। जो सफल किया वो वहाँ मिलेगा। अगर कुछ रहा हुआ होगा तो बुद्धि उसमें अटकेगी। हमारे पास कुछ न रहे, जैसे अग्नि संस्कार करने के समय यहाँ से हाथ खाली जायेंगे, सिर्फ टीका लगाके फूल चढ़ायेंगे, बस। हमने जीते-जी योगाग्नि से संस्कारों को परिवर्तन करके बाबा को अपना संसार बना दिया। अब कुछ भी पुराना अन्दर न रहे, राख भी न रहे, कोई हड्डी भी न रहे। सब खत्म हो जाये तो कहेंगे ऊंच पद पाया। बाबा को है, मेरे बच्चे पढ़ाई ऐसी पढ़ें जो ऊंच पद पावें।

कोई भी ग्रहचारी है तो योग में नींद कराती है या सेवा में विघ्न डालती है, या कोई स्वभाव-संस्कार के वश हो करके उदास हो जाते हैं या किसी से मिलनसार होके नहीं चल सकते हैं। ग्रहचारी न रहे, उसके लिए नियम में कोई गड़बड़ न हो, हेराफेरी न हो, दिखावा न हो, सच्चाई में ज़रा-सी भी कमी न हो तो जो करेंगे उसमें सफलता मिलती रहेगी। विघ्न तो आयेंगे, कोई बड़ी बात नहीं है, पर अन्दर की स्थिति निर्विघ्न रहे। किसी को कुछ न कहके, शान्ति से, बाबा की याद में रहो तो विघ्न खत्म हो जायेंगे। बाबा सिखाता है, जो बीता सो अच्छा है। हरेक का पार्ट अपना है इसलिए बातें तो होंगी ही लेकिन बाबा कहते, तुमको तो मुस्कराते हुए रहना है। खुशी से सेवा करनी है, इसमें कभी थकना नहीं है। सारे यज्ञ की ज़िम्मेवारी बाबा के ऊपर है, बच्चों की ज़िम्मेवारी भी बाबा पर है तो हम क्यों सोचके, देखके सिर गर्म करें... क्या ज़रूरत है? हल्के रहो, नाचते रहो, उड़ते रहो, उड़ाते रहो। नहीं नाचो लेकिन खुश तो रहो क्योंकि हमारे जैसा खुशनसीब कोई नहीं, ऐसे हंसते-गाते जीते रहो। बाकी कोई बात न सोचो, न बोलो तो ओके (O.K.) रहेंगे।

मन में अनेकानेक इच्छायें होने के कारण कर्मेन्द्रियाँ मन को कहती हैं और मन कर्मेन्द्रियों को कहता है, दोनों की हाँ में हाँ से मन कर्मेन्द्रियों का गुलाम हो गया। तो कैसे सुख पायेंगे? **बाबा कहते, अतीन्द्रिय सुख महसूस करना हो तो जो भगवान सिखाता है वही बोलना सीखो, कराने वाला बाबा जो करा रहा है वही करो और अपनी बुद्धि की डोर बाबा के हाथों में दे दो तो बाबा अन्दर ही अन्दर नचाता रहेगा, तब मन को, कर्मेन्द्रियों को जीतने से अतीन्द्रिय सुख महसूस होगा। ऐसे अतीन्द्रिय सुख में रहने वाली आत्मा सत्, चित्, आनन्द स्वरूप हो जाती है, जिससे अन्दर का सारा कूड़ा-किचड़ा निकल जाता**

है। स्थूल हीरे के अन्दर का दाग निकाल नहीं सकते, पर इस चैतन्य हीरे के अन्दर छिपे दाग को निकाल सकते हैं।

समझदार वो जो परमात्मा की शक्ति और प्यार को अपने जीवन का आधार बना लेवे। अनुभव ही हमारे जीवन का आधार है। तो पहले जिस तरह से समय गया सो गया, परन्तु अभी मुझे समय नहीं गँवाना है क्योंकि समझ में आ गया कि भले बाबा के तो बन गये, त्याग भी हो गया, पवित्रता का पालन कर लिया, ब्रह्माकुमार ब्रह्माकुमारी किसको कहा जाता है वो भी समझ लिया परन्तु उन्हों में भी नम्बरवन बी.के. बनना है, ऐसा पुरुषार्थ हो। बाबा ने कहा है – त्रिकालदर्शी बन जाओ, कल का दर्शी, सुबह का दर्शी, शाम का दर्शी नहीं, त्रिकालदर्शी। बीती को चितवो नहीं। मनपसंद नहीं, प्रभुपसंद करो। प्रभुपसंद चलेंगे तो आपको भी अच्छा, जहान को भी अच्छा।

अंतिम जन्म में भी ईश्वर ही करता, ईश्वर ही देता, सदा यही ख्याल रहता, मुझे कोई मनुष्य से नहीं मिलता, ईश्वर देने वाला बैठा है। जिसका देने वाला दाता स्वयं भगवान है, वह मंगता कभी नहीं हो सकता, वह दाता है। भाग्यविधाता मेरा ब्रह्मा बाबा, वरदाता शिव भोलानाथ है। दीदी की बात सुनी, 'अब घर चलना है।' दादी कहती, ' कर्मातीत बनना है।' मम्मा कहती, ' अभी कर लो न!' अमृतवेले मम्मा, दीदी, दादी का बहुत पक्का था। अभी जहाँ भी हैं वहाँ अमृतवेले सेवा कर रहे हैं। अमृतवेले का बहुत महत्त्व है। भारी जो होगा, उसका अमृतवेला कभी कैसा, कभी कैसा होगा, कामचलाऊ बैठकर, झुटका खाकर सो जायेगा। थोड़ा अपने ऊपर ध्यान रखेंगे तो संगमयुग बहुत महान युग है। मन शांत हो गया, बुद्धि श्रेष्ठ हो गई तो संस्कार बदल गये। रावण अब कुछ नहीं कर सकता, बुद्धिवानों की बुद्धि बाबा अपना काम कराने के लिए कहता, बच्चे, सिर्फ न्यारे और प्यारे रहो जैसे मैं न्यारा और सबका प्यारा हूँ। बड़ी अच्छी कम्पनी भगवान की है। नीयत अन्दर से साफ है, नि:स्वार्थ भाव है तो जो संकल्प किया वो हो जायेगा, हुआ ही पड़ा है। बाबा हमारी ऐसी स्थिति बनाता है। हम यहाँ सिर्फ खाने-पीने के लिए नहीं बैठे हैं। खाते हैं तो भी ऐसी अवस्था बनाने के लिए खा रहे हैं। खाना-पहनना ऐसा मिल रहा है जो और कहाँ बुद्धि नहीं जाती है। ❖

आवश्यक सूचना

1. आपको ज्ञात ही होगा कि जुलाई मास से **'ज्ञानामृत'** एवं **`The World Renewal'** का नया वर्ष आरंभ हो रहा है। इस नये वर्ष में पेपर के रेट में वृद्धि के कारण 2009-10 से पत्रिकाओं का वार्षिक शुल्क 75 रुपये एवं आजीवन 1500 रुपये तथा विदेशों का वार्षिक शुल्क 700 रुपये एवं आजीवन 7,000 रुपये ही रहेगा।

2. शुल्क राशि भेजते समय किसी के भी पर्सनल नाम पर नहीं भेजें, केवल **'ज्ञानामृत'** या **`The World Renewal'** के नाम पर ड्राफ्ट, मनीऑर्डर या डाकघर द्वारा EMO से भेजें। शान्तिवन डाकघर में ई.मनीऑर्डर (EMO) सुविधा उपलब्ध है जिस द्वारा उसी दिन 10 मिनट के अंदर भारत के किसी भी कोने से पत्रिकाओं की राशि शान्तिवन डाकघर में पहुँच जाती है जिसका पिन कोड नं. 307510 है। EMO के लिए मनीऑर्डर की तरह ही अपना पूरा पता तथा पिन कोड नं. अवश्य देना होता है।

3.आपको ज्ञात होगा कि स्टेट बैंक ऑफ इंडिया (SBI) की ब्रांच शान्तिवन में है, अत: कोई भी ड्राफ्ट शान्तिवन, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया (SBI) के नाम से ही भेजें। बैंक का कोड नं. 10638 है। इसी नं. से शान्तिवन ब्रांच के नाम से ड्राफ्ट बनवायें और किसी भी दूसरे बैंक का ड्राफ्ट न बनवायें। केवल स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, शान्तिवन ब्रांच का ही ड्राफ्ट बनवायें।

4. ड्राफ्ट के ऊपर केवल **'ज्ञानामृत, शान्तिवन'** या **`The World Renewal, Shantivan'** ही लिखें। किसी व्यक्ति या शहर का नाम न लिखें।

5. नये डायरेक्ट पोस्ट करने वाले पते कृपया टाइप करके या बड़े अक्षरों (Capital Letters) में साफ-साफ भेजें।

संपर्क के लिए

ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन,
शान्तिवन-307510 (आबू रोड) राजस्थान।
फोन : 02974-228125
फैक्स : 02974-228116
मोबाइल : 09414006904, 09414154383
E-mail : omshantipress@bkivv.org

मम्मा गुणों की खान थीं

• दादी शांतामणि

मम्मा का लौकिक नाम राधे था। उनके पिता का नाम पोकरदास और माता का नाम रोचां था। उनका जन्म सन् 1919 में अमृतसर में हुआ। उनकी एक बड़ी बहन थी जिसका नाम पार्वती था। उसकी शादी पहले हो चुकी थी और एक इनकी छोटी बहन थी जिसका नाम गोपी था। उनके पिता सोने-चांदी का व्यापार करते थे और देशी घी के थोक व्यापारी भी थे। उनका व्यापार मुंबई, मद्रास और सिलोन (श्रीलंका) में था। अचानक राधे के पिता की मृत्यु हो गई। सोने-चांदी के व्यापार में और सट्टेबाजी में उनका इतना घाटा हो गया कि वे एकदम खाली हाथ हो गये। इससे उनको हृदयाघात हो गया। फिर राधे अपनी माँ और छोटी बहन गोपी के साथ सिन्ध-हैदराबाद अपनी नानी और मामा के घर आ गयी। वे अमृतसर से ही हैदराबाद गये थे।

विद्यार्थी जीवन में भी अद्वितीय लक्षण

हैदराबाद में दोनों बहनें स्कूल में दाखिल हो गयीं। राधे पढ़ाई में हमेशा नंबरवन थी। गाने में नंबरवन और डांस करने में भी नंबरवन थी। स्कूल में जब भी कोई स्पर्धा होती थी तो राधे को ही प्रथम पुरस्कार मिलता था। राधे का मशहूर गीत था, 'ट्विंकल ट्विंकल लिटिल स्टार ...।' सफ़ेद फ्राक और सिर पर हैट पहनकर राधे डांस करती थी तो लोग दंग रह जाते थे। राधे की हॉबी (शौक) थी कि बाज़ार में जो भी नये बढ़िया कपड़े आयें सबसे पहले वही ख़रीदती थी, इतनी फैशन की शौकीन थी। फ्राक पर जो डिज़ाइन होती थी उसको राधे ख़ुद अपनी बुद्धि से निकालती थी। वे अपनी बड़ी बहन पार्वती से कहती थी और पार्वती अपनी मामी रूपवंती से डिज़ाइन की फ़्राक बनवाती थी। रोज़ राधे नयी-नयी डिज़ाइन वाली फ़्राक पहनकर स्कूल जाती थी। राधे के बाल तो बहुत लम्बे थे, साथ में वह बहुत सुन्दर भी थी। राधे की छोटी बहन गोपी का रूप-रंग भी राधे जैसा ही था। स्कूल से उनके आते-जाते समय लोगों की नज़रें सहज ही उन पर पड़ती थीं और वे अवाक् रह जाते थे। राधे हैदराबाद (सिन्ध) के कुन्दनमल मॉडल स्कूल में पढ़ती थी। उन्होंने अपनी पढ़ाई मैट्रिक तक पढ़ी।

जीवन-पथ में आशा-दीप

हमारी माँ और मम्मा की माँ सगी बहनें थीं। इनकी एक और बहन अर्थात् हमारी दूसरी मासी थी, उसका नाम ध्यानी था। उसके पति का भी देहांत हो गया था। वह भी हैदराबाद अपने पीयरघर अर्थात् हमारे मामा के घर आ गयी। इस प्रकार, उस घर में दो अपने पतियों को खोकर और तीन बहनें अपने बाप को खोकर बहुत दु:खी थीं। वे दो मातायें तो दु:ख से बहुत रोया करती थीं और भगवान से प्रार्थना करती थीं। हमारी माँ भी उनके घर जाकर प्रार्थना में उनका साथ देती थी, जप साहेब, सुखमणि आदि पढ़कर सुनाती थी ताकि उनका दु:ख कम हो जाये और उनके मन को शांति मिल जाये। हमारी माँ उनके पास आया-जाया करती थी तो इनको रोज़ बाबा की पत्नी जशोदा माता अपने घर की खिड़की से देखती थी। एक दिन रास्ते में जशोदा माता और हमारी माता की मुलाकात हो गयी। उसने हमारी माँ से पूछा, आप रोज़ कहाँ जाती हो? हमारी माता जी ने कहा, हमारी दोनों बहनों के पति गुज़र गये हैं, वे बहुत

दु:खी हैं, हम सब मिलकर शान्ति के लिए सत्संग करते हैं। तब उन्होंने कहा, दादा अपने घर में बहुत अच्छा सत्संग करते हैं, पहले आप आओ, अनुभव करो और आपको अच्छा लगे तो उनको भी लेकर आना। उनके निमंत्रण पर हमारी माँ दूसरे दिन वहाँ गयी। बाबा हाथ में गीता उठाकर उसके श्लोक पर समझा रहे थे। गीता के दूसरे अध्याय में आत्मा के ऊपर ही सारा ज्ञान है जैसे कि आत्मा अमर, अविनाशी है, मरती नहीं है, आत्मा पुराना शरीर छोड़ नया शरीर लेती है इसलिए रोने की दरकार ही नहीं है, यह सब आत्मा का खेल है आदि-आदि। बाबा जब सत्संग शुरू करते थे तब भी ॐ की ध्वनि लगाते थे और पूरा करते थे तो भी ॐ की ध्वनि लगाते थे। ॐ की ध्वनि सुनते ही सबको शरीर से भिन्न होने का अनुभव होता था। इसी प्रकार हमारी माँ को भी यह अनुभव हुआ तो अगले दिन वह अपनी दोनों बहनों (राधे की माँ और ध्यानी माता) को लेकर बाबा के पास गयी। बाबा से आत्मा का पूरा ज्ञान सुनने के बाद और शरीर से भिन्न होने का अनुभव करने के बाद ये दु:खी मातायें बहुत ख़ुश हो गयीं। सत्संग से घर लौटी हुई अपनी माँ और मासी के खिले हुए चेहरे देखकर राधे को बहुत आश्चर्य हुआ। राधे ने उनसे पूछा, 'कल तो आप दोनों बहुत रोती थीं, आज तो चेहरे ख़ुशनुमा हैं, खिले हुए हैं, वहाँ क्या मिला आपको?' तब उनकी माँ ने कहा, 'हम दादा के पास गये थे, वे बहुत अच्छा गीता के ऊपर समझाते हैं, तुम स्कूल में तो गीता के बारे में पढ़ती ही होंगी, तुम भी चलो, सुनने के बाद हमें भी उसका अर्थ समझाना।' इस प्रकार, राधे को भी अगले दिन सत्संग में लेकर गयीं। जब राधे को बाबा ने देखा तब उसी पल बाबा को लगा कि यह मेरी वारिस बेटी है और राधे को भी उसी क्षण महसूस हुआ कि यह मेरा बहुत काल से बिछुड़ा हुआ वही पिता है। बाद में, बाबा जैसे लौकिक रीति से हालचाल पूछते थे वैसे राधे से पूछा, बेटी, तुम क्या करती हो, कैसी हो आदि-आदि।

जीवन का फैसला एक पल में

उस समय राधे की आयु करीब 17 वर्ष थी। घर में राधे की शादी की बात चल रही थी। एक दिन बाबा ने राधे से पूछा, 'राधे, तुमको पीतांबरधारी से शादी करनी है या सूट-बूट वाले से? इस ज्ञान से स्वयं का कल्याण और विश्व का कल्याण करना है या शादी करके घर संभालना है? सोच-विचार करके मुझे बताना।' बाबा ने राधे को 24 घंटे का समय दिया था जवाब देने के लिए लेकिन राधे ने एक पल में ही भविष्य का फैसला ले लिया और उसी पल बाबा को उत्तर दिया, 'बाबा, मैं गिरधर गोपाल की वही राधे हूँ, मैं इस ज्ञानमार्ग में चलकर विश्व का कल्याण करूँगी।' उसी दिन से लेकर बाबा राधे के ऊपर ज्ञान की वर्षा बरसाने लगे और ज्ञान का कलश भी रख दिया। राधे सत्संग में ॐ की ध्वनि बहुत अच्छी करती थी। आने वाले सब ॐ की ध्वनि से बहुत आकर्षित होते थे। इसके कारण सब उसको ॐराधे कहने लगे। बाबा भी ॐराधे कहने लगे। इस तरह, राधे का नाम 'ॐराधे' हो गया।

ॐराधे बहुत सुन्दर गाती थी। जब उसने 'ॐ मंडली में आकर क्या देखा और क्या पाया' यह गीत लिखकर गाया तो बाबा बहुत प्रभावित हुए। बाबा रोज़ उनको एक गीत लिखकर देते थे और ॐराधे उसे क्लास में गाकर सुनाती थी। जब ॐराधे गीत सुनाती थी तो सुनने वाले बहुत खुश होते थे और उनके दिल पर अमिट छाप लग जाती थी। धीरे-धीरे सत्संग बढ़ता गया। उसमें मातायें भी आती थीं तो कन्यायें भी आती थीं।

ॐराधे सो श्री अनुराधे

इसी बीच बाबा अपने लौकिक परिवार के साथ कश्मीर चले गये। कश्मीर जाने के बाद बाबा रोज़ ॐराधे के नाम से और अन्य बहनों के नाम से पत्र भेजा करते थे। जिनके नाम से पत्र आते थे वे बहनें उन पत्रों को सत्संग में सुनाती थीं। सत्संग में और वृद्धि होने लगी। एक दिन ॐराधे की छोटी बहन गोपी क्लास में

बैठी थी। ॐ की ध्वनि लगाते ही वह ध्यान में चली गयी। उसको श्री कृष्ण का साक्षात्कार हो गया और वह उठकर डांस करने लगी। सत्संग में यह पहला-पहला साक्षात्कार था। इसके बाद, सत्संग में आने वाले अन्य भाई-बहनों को भी साक्षात्कार होने लगे। जब बाबा कश्मीर से आये तो उनको देखते ही गोपी को श्री कृष्ण दिखने लगा। उसी समय ॐराधे उसको श्री राधा दिखाई पड़ने लगी। तब वह दोनों को पकड़ कर रास करने लगी। दिव्यदृष्टि की लीला अथवा पार्ट तब खुल गया। धीरे-धीरे वहाँ आने वाले सब ध्यान में जाने लगे; श्री कृष्ण, श्री राधा अथवा श्री नारायण, श्री लक्ष्मी को देखने लगे और उनके साथ रास करने लगे। तब बाबा के मुखारविन्द से निकली पवित्रता की बात। बाबा कहने लगे, 'बच्चे, श्री कृष्ण की राजधानी वैकुण्ठ में जाना है तो तुमको पवित्र बनना पड़ेगा।' जो कन्यायें थीं उनको तो कोई समस्या न थी, जो गृहस्थी थीं और जिनके पति व्यापारार्थ विदेशों में गये थे, वे आये तो घरों में (पति-पत्नी के) झगड़े होने लगे। पति कहने लगे कि हमें विकार रूपी विष चाहिए, पत्नी कहने लगी कि हमने तो परमात्मा को वचन दिया है कि हम पवित्र रहेंगे, हम विष दे नहीं सकतीं। तो उनके पति सोचने लगे और आपस में बातें करने लगे कि आख़िर यह

कौन जादूगर आया है जो सबको श्री कृष्ण का दर्शन कराता है और उनको पवित्र रहने के लिए कहता है? फिर विरोध प्रदर्शन, पिकेटिंग आदि शुरू हो गयी। लेकिन ॐराधे सत्संग संभालने का अपना कार्य निश्चिन्त और अचल होकर करती रही। यह है सन् 1936 की बात। कोई पूछता था तो बाबा कहते थे कि मैं तो कुछ नहीं करता। यह सत्संग तो उन कन्याओं-माताओं का है। सत्संग वो कराता है। ऊपर वाला आता है, बोलकर चला जाता है। ऊपर वाला जैसे कहेगा मैं भी वैसे करने वाला हूँ। मुझे तो कुछ भी नहीं पता। ऐसे कहकर सबको ॐराधे की तरफ़ भेज देते थे। हमेशा बाबा ॐराधे को आगे रखते थे।

गोपी का साक्षात्कार का पार्ट पूरे एक वर्ष तक चला। बाद में उसको टायफाइड हुआ, हैदराबाद में उसने शरीर छोड़ दिया। तब बाबा ने सत्संग में जो भी मातायें-कन्यायें आती थीं उन सबको श्मशान घाट पर भेजा था। सिन्ध के इतिहास में यह पहली घटना थी, नहीं तो श्मशान घाट पर स्त्रियाँ नहीं जाती थीं। शवयात्रा में इतनी सारी महिलाओं को देख लोग आश्चर्य खा रहे थे। अग्नि-संस्कार का कार्य ॐराधे ने ही किया था।

ॐराधे बनी मम्मा अर्थात् मातेश्वरी

मम्मा 17-18 साल की कन्या थी लेकिन सब उसको मम्मा, माँ कहते थे। बाबा भी कभी मम्मा कहते थे, कभी बेटी कहते थे, कभी मम्मा-बेटी दोनों कहते थे। इस प्रकार, ॐराधे मम्मा बन गयी। धीरे-धीरे उनके शरीर में भी, इस नाम के अनुसार, परिवर्तन आ गया।

दिन-प्रतिदिन सत्संग में वृद्धि होती चली गयी, तो बाबा ने ॐराधे को इस सत्संग के लिए अवैतनिक संचालिका

नियुक्त किया और उनके साथ आठ अन्य ज्ञाननिष्ठ माताओं और कन्याओं की एक कार्यकारिणी समिति बनाकर अपनी समस्त धन और संपत्ति माताओं की समिति को अर्पित कर दी।

मम्मा का पुरुषार्थ

मम्मा के व्यक्तिगत पुरुषार्थ के बारे में एक बात अति महत्त्वपूर्ण है कि **मम्मा को एकान्तवास बहुत प्रिय लगता था। वह रोज़ दो बजे उठकर बहुत प्यार से बाबा को एकान्त में याद करती थी। मम्मा की याद इतनी प्यार भरी रहती थी कि उनकी आँखों से प्रेम के मोती निकलते थे। मम्मा चाँदनी रातों में बैठकर रात भर तपस्या करती थी।**

मम्मा और जशोदा माता

बाबा की लौकिक पत्नी जशोदा माता भी मम्मा को मम्मा कहती थी और मम्मा की गोद में जाती थी। इनके बीच में बहुत अच्छे और अति मधुर संबंध थे क्योंकि जब जशोदा माता, मम्मा को देखती थी तो उनको श्री लक्ष्मी का साक्षात्कार होता था। उनका भी बाबा पर और बाबा के महावाक्यों पर दृढ़ निश्चय था।

हमने बाबा-मम्मा के साथ बहुत खेला, घूमा, बहुत आनन्द लिया है। कराची में मम्मा, बाबा और हम एक स्थान पर नहीं रहते थे। बाबा अलग और मैं और मम्मा एक अलग स्थान पर। बाबा अपने स्थान पर रहकर सलाह-सूचना देते थे और मम्मा हमें बताती थी। हम सभी मम्मा के साथ रहकर सभी कार्य करते थे। जब आबू (राजस्थान) आये तो सब मिलकर रहने लगे। उस समय हम बाबा के संपर्क में ज़्यादा रहे। आबू की बृजकोठी में मम्मा का तपस्या का पार्ट चला। वहाँ भी हमें दिव्य साक्षात्कार होते थे जिनसे बाबा हमें बहुत बहलाते थे।

बेगरी पार्ट में मम्मा-बाबा का जो पार्ट था वो आश्चर्यचकित करने वाला और अवर्णनीय है। उस समय मम्मा-बाबा दोनों, जब तक सभी बच्चे नहीं खाते थे, तब तक कुछ नहीं खाते थे। **बाबा की उपस्थिति में मम्मा कोई राय नहीं देती थी। जैसे बाबा कहे, जो करने के लिए कहे, वही करती और कराती थी। अगर बाबा नहीं है, तो उनकी ग़ैरहाज़िरी में मम्मा अपना फैसला सुनाती थी। इतना बेहद सम्मान देती थी बाबा को!**

मैं और मम्मा

मम्मा का श्री लक्ष्मी का रूप मुझे बहुत प्यारा लगता था। लगता था कि श्री लक्ष्मी मेरी माँ है। मैं मम्मा को कभी इस नज़र से नहीं देखती थी कि वह मेरी मासी की लड़की है, मेरी बहन है। लेकिन उसको इस नज़र से देखती थी कि यह मेरी माँ है, जगदम्बा है। **मम्मा तो गुणों की खान थी, उसमें सब गुण विद्यमान थे। मुझे मम्मा का गंभीरता का गुण बहुत अच्छा लगता था। गंभीरता के साथ सहनशीलता और धैर्य इन तीनों गुणों को मैं भी अपने जीवन में धारण करने का और व्यवहार में लाने का ध्यान रखती हूँ।**

ब्राह्मण परिवार के लिए संदेश

मम्मा की तरफ़ से सर्व ब्राह्मण कुलभूषणों के लिए मेरा यही संदेश है कि मम्मा हमेशा कहा करती थीं, 'आलवेज सी गॉड फादर और फॉलो ब्रह्मा फादर (Always see God-Father and Follow Brahma Father)। तुम बच्चों को परफेक्ट (संपूर्ण) बनना है तो सदा शिव बाबा को ही याद करो, उनकी श्रीमत पर चलो और ब्रह्मा बाबा का अनुसरण करो। हुक्मी हुक्म चला रहा है। कभी शिव बाबा पर संशय में नहीं आओ। संपूर्ण निर्विकारी बनो।' ❖

प्यारे बाबा कहते हैं – ''बच्चों, ये जो ज्ञान आपने प्राप्त किया है, यह बहुत ही अद्भुत और अनमोल है, यह प्रायः लुप्त हो चुका है। जब इस ज्ञान को आप दूसरों को सुनायेंगे तो वे बहुत ही खुश होंगे और प्रभु पर न्योछावर होंगे। इस विश्व ड्रामा में नर-नारियों को घोर अज्ञान-नींद से जगाने के आप निमित्त बने हुए हैं। क्या आपके कानों में भक्तों की पुकार सुनाई नहीं दे रही? एकांत में जाकर ज़रा बैठो तो मालूम होगा, भक्त पुकार रहे हैं, हे जगजननी, हे अंबे, हे शक्ति माता, हे ज्वाला देवी, हे शीतला मैया, अब हमें शांति, शक्ति और शीतलता का मंत्र दो, हमें गिरने से थामकर हाथ पकड़ कर उठा लो; तो बच्चे पुकार सुनो और उपकार करो।''

जीभ प्रबन्धन

• ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

इस विशाल विश्व रंगमंच पर सभी मनुष्य अपने-अपने लौकिक कर्मों के प्रबन्धन में व्यस्त हैं। किसी भी कार्य के श्रेष्ठ प्रबन्धन की पहचान है – 'लाभप्रदता' व 'सन्तुष्टता'। परन्तु आज देखने में यह आता है कि लाभ तो प्राप्त होता है परन्तु संतुष्टता प्राप्त नहीं होती। कारण यह है कि लाभ कमाने की विधि 'शुद्ध' नहीं है, और लाभ को लोभ की वृत्ति असीमित कर देती है। सीमाबद्ध लाभ ही संतुष्टता देता है। लाभ यदि किसी को हानि पहुँचा कर कमाया गया है तो उसकी 'आहत भावना' के प्रकंपन असंतुष्टता की अनुभूति कराते हैं। असंतुष्टता से दुख व अशान्ति प्राप्त होती है। तो आवश्यकता है 'कर्म' का प्रबंधन करने की।

यूँ तो विश्व में 'प्रबंधन' पर अनेक पाठ्यक्रम जीभ के माध्यम से पढ़ाये जा रहे हैं परन्तु अभी तक जीभ प्रबन्धन की दिशा में सोचा ही नहीं गया है। यह एक विचारणीय विषय है कि भौतिक पदार्थों का प्रबन्धन सीखने व सिखलाने वाली आत्मा स्व का प्रबन्धन जानती ही नहीं। कारण है 'आत्मा, आत्मा को नहीं जानती।' आत्मा शरीर का अनुभव करती है, स्वयं का नहीं। यह हास्यास्पद ही है कि जो मनुष्य स्वयं का साक्षात्कार करना नहीं जानता, वह आज ईश्वर का साक्षात्कार चाहता है। ईश्वर का साक्षात्कार करने के लिये क्रमशः 'आत्मज्ञान', 'आत्मानुभूति', 'आत्मावलोकन' व 'आत्मप्रबन्धन' की आवश्यकता है। यदि 'जीभ प्रबन्धन' श्रेष्ठ है तो यह सूचक है श्रेष्ठ 'आत्मप्रबन्धन' का।

कर्म में जीभ की भूमिका हो भी सकती है और नहीं भी, परन्तु 'बोल' में जीभ की मुख्य भूमिका है। पशुओं में जीभ, वाचा में कम आती है अतः वे व्यर्थ बोल व संकल्पों के शिकार कम होते हैं जबकि मनुष्यों में इसके विपरीत है। आज मनुष्यों की स्मृति में 90 प्रतिशत व्यर्थ की बातें भरी हैं अतः उनके बोल भी 90 प्रतिशत अनावश्यक और व्यर्थ के होते हैं, जो फिर उन्हें तनावग्रस्त व बोझिल रखते हैं। सतयुग में यह 90 प्रतिशत व्यर्थ वाला हिस्सा होता ही नहीं, अतः वे आज की तुलना में कम बोलते हैं और सुखी आनन्दमय जीवन जीते हैं। वहाँ शब्दों से कम और संकल्पों, भावनाओं व 'सदाचारी मनोवृत्ति' से ज़्यादा वार्तालाप होती है। आज वार्ता कम और 'आलाप-विलाप' ज़्यादा होता है। आज की आवश्यकता यह है कि जीभ का उचित प्रबन्धन करके इसे 90 प्रतिशत के व्यर्थ बोलों से विश्राम दिया जाये।

जीभ प्रबन्धन की आवश्यकता क्यों?

इसे समझने के लिये एक वृत्तान्त पर ध्यान दीजिए। देश के बंटवारे के बाद स्व. जवाहरलाल नेहरू भारत के प्रथम प्रधानमंत्री बने। उस समय शेख अब्दुल्ला कश्मीर के मुख्यमंत्री बने थे, परन्तु वे प्रधानमंत्री की इच्छा के विरुद्ध बार-बार पाकिस्तान की यात्रा कर लिया करते थे। इससे नेहरू जी अक्सर परेशान रहते थे और सार्वजनिक बयान देकर शेख अब्दुल्ला की यात्रा को अनावश्यक बताया करते थे। एक बार प्रातः अखबार में शेख अब्दुल्ला पर दिये गये अपने बयान को पढ़ते हुए जब वे दुखी हो रहे थे तो उनकी पुत्री इन्दिरा गांधी ने उन्हें कहा कि शेख अब्दुल्ला की समस्या खुद आपकी पैदा की हुई है। आप उनकी गतिविधियों पर जो बार-बार बयान देते रहते हैं, उससे उन्हें प्रचार मिलता है और उनकी शक्ति बढ़ती है। आप उन्हें नज़रअंदाज़ करते रहो तो वे धीरे-धीरे कमज़ोर पड़ते जायेंगे। नेहरू जी ने ऐसा ही किया और उनकी समस्या दूर हो गई। इस एक घटना से नेहरू जी ने अपनी पुत्री की मानसिक क्षमता को पहचाना, स्वीकारा और उन्हें राजनीति में आने की इजाज़त दे दी। यदि राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय मंच पर बैठे ज़िम्मेवार व्यक्ति अपनी जीभ का संयम रखें, इसका प्रबन्धन सीख लें और अन्य व्यक्ति के व्यर्थ के बोल को इतना महत्त्व न दें तो आधी से ज़्यादा

समस्याएँ पैदा ही न हों। परन्तु ऐसा शब्दों पर संयम अर्थात् 'जीभ प्रबन्धन', जीभ वाले (आत्मा) का ज्ञान हुए बगैर आ नहीं सकता। जीभ प्रबन्धन एक माध्यम है 'आत्म प्रबन्धन' का।

जीभ का कार्यक्षेत्र

जीभ का मुख्य कार्य शरीर के लिए आवश्यक भोज्य पदार्थों की गुणवत्ता का स्वाद लेकर उन्हें अन्दर उतारना है। बोलने का कार्य दूसरे नम्बर पर आता है। बिना बोले संसार के सारे कार्य चल सकते हैं परन्तु बिना भोजन के शरीर नहीं चल सकता। भोजन यदि जीने के लिए ज़रूरत भर का लिया जाये और वाचा में भी ज़रूरत भर का आया जाये तो इसे 'जीभ का उचित प्रबन्धन' कहा जा सकता है। आत्मा यदि परमात्मा के निकट आना चाहती है तो मौन-साधना आवश्यक है, जबकि ऊँची आवाज़ में भजन-आरती गाना गौण-साधना है, जो मात्र अल्पकाल की संतुष्टता ही देती है।

कहा जाता है – 'सोच-समझ कर बोलो'। इसे ऐसे भी कह सकते हैं कि **'सत्य बोलो, कम बोलो, मीठा बोलो, धीरे बोलो, स्वमान से बोलो, तोल कर बोलो, सोच कर बोलो।'** परन्तु आज के तमोप्रधान समाज में वक्ता का देह भान या अभिमान बोल को दूषित कर देता है या सुनने वाले उस बोल के भाव में अपना दूषित नज़रिया मिला देते हैं।

कहते हैं – 'एक चुप हज़ार को हरावे' परन्तु यह है बड़ा मुश्किल क्योंकि 'अभिमान' चुप रहना नहीं जानता। न बोलना 'सह-मति' (अर्थात् सहनशील, सहयोगी व समर्थ बुद्धि) की निशानी है, कम बोलना 'धीर-मति' (धैर्यचित्त बुद्धि) की निशानी है। अधिक बोलना 'मन्दमति' की निशानी है और अत्यधिक बोलना 'मूढ़मति' की निशानी है। अपने-अपने विचारों की शाब्दिक व्याख्या 'भाषण' के माध्यम से करने वाले सर्वत्र उपलब्ध हैं परन्तु अपने कर्म से अपने विचारों की व्याख्या करने वाला कोई इक्का-दुक्का ही होता है। और यदि कोई है भी, तो उस पर आज के मनुष्यों की नज़र ही नहीं जाती, मानो उन्हें रतौंधी हो गई हो। ऐसे बोल, विचार या सिद्धान्त जो कर्म में ना आयें, दिमागी ऐयाशी हैं। जब जीभ बोलती है तो व्यक्ति व संस्कार दिखाई देते हैं और जब कर्म बोलता है तो आत्मा दिखाई देती है। कर्त्ता है ही आत्मा।

कहावत है :

अति का भला न बोलना,
अति की भली न चुप,
अति का भला न बरसना,
अति की भली न धूप।

अर्थात् बोलना, चुप रहना, वर्षा का होना व धूप का निकलना भी यदि अति में हो तो नुकसानदायक है। हर क्रिया का एक अनुकूलतम स्तर होता है। जीभ प्रबन्धन की दिशा में मानव ने आज तक सोचा ही नहीं है परन्तु यदि उसे यह समझ में आ जाये कि उसके सारे जीवन की सुख-शान्ति का मूल आधार जीभ के क्रिया-कलाप पर या 'जीभ प्रबन्धन' पर टिका है तो वह इस दिशा में अवश्य प्रयत्नशील हो जाये।

जीभ को कब, कहाँ, कितना और किस हेतु इस्तेमाल करना है, यह भी एक उच्च कोटि का प्रबन्धन है। यह आश्चर्य ही है कि जिस साधन (जीभ) के प्रबन्धन पर सारे विश्व की शान्ति निर्भर करती है, उसे अभी तक सबसे उपेक्षित रखा गया है। इसे तो शरीर के एक अंग से ज़्यादा कुछ समझा ही नहीं गया है। नाक 'अहंकार' का प्रतीक है। कहते भी हैं – मेरी नाक का सवाल है, उसकी नाक कट गई, मैं अपनी नाक नीचे नहीं होने दूंगा आदि-आदि। परन्तु नाक की लड़ाई में युद्ध जीभ करती है। नाक हमेशा अचल-अडोल होती है जबकि जीभ बिना चले-डोले-बोले, एक मिनट भी रह नहीं सकती। यह तो शरीर के सभी अंगों के कुशल-क्षेम की मानो ठेकेदार है। बीमार चाहे कोई भी अंग हो परन्तु डॉक्टर को बीमारी का ब्योरा जीभ ही बताती है। जीभ ही तलाक करा देती है तो वर्षों पुराने संबंध जुड़ा देती है। किसी वकील को मुकद्दमा जितवा देती है तो जीता हुआ मुकद्दमा अगली अदालत में हरा देती है। ज़्यादा बोल कर दिमाग खराब करा देती है तो कम बोल कर दूसरे को प्रसन्न भी कर देती है। सुर में गाकर वाह-वाही करा देती है तो बेसुरा गाकर हॉल खाली करा देती है। जीभ की महत्ता अपार है, अपरंपार है।

(क्रमशः)

जीवन जीने का ढंग

• ब्रह्माकुमारी विजय, बीकानेर

एक शिष्य ने अपने गुरु से पूछा, महाराज! संसार में रहने का तरीका क्या है? गुरु ने कहा, बहुत अच्छा प्रश्न किया तुमने, एक-दो दिन में उत्तर देंगे। अगले दिन गुरुजी के पास एक व्यक्ति कुछ फल और मिठाइयाँ लेकर आया जिन्हें उनके सामने रखकर, उन्हें दण्डवत् प्रणाम कर उनके पास बैठ गया। गुरु जी ने उस व्यक्ति से कुछ विशेष बातें नहीं कीं, पीठ मोड़ी और सभी फल खा लिए। वह व्यक्ति सोच में पड़ गया कि विचित्र साधु है, वस्तुएँ स्वीकार कर ली लेकिन मुझसे ढंग से बातें भी नहीं की। इस सोच ने उसे क्रुद्ध कर दिया, वह उठा और चल दिया। उसके जाने के बाद गुरु जी ने शिष्य से पूछा, क्यों भाई! क्या कहता था वह आदमी? शिष्य बोला, महाराज! वह तो बहुत क्रुद्ध था, कहता था कि वस्तुएँ तो खा लीं पर मुझसे ढंग से बोले भी नहीं। महात्मा जी बोले, तो सुन, संसार में रहने का यह ढंग ठीक नहीं, कोई दूसरा ढंग सोचना चाहिए।

थोड़ी देर पश्चात् एक दूसरा व्यक्ति आया। वह भी फल ले आया जिन्हें गुरु जी के सामने रख बैठ गया। गुरु जी ने फलों को उठाया और आश्रम से लगती गली में फेंक दिया। फिर उस व्यक्ति से बड़े प्यार और सम्मान के साथ बातें करने लगा। घर, परिवार, कारोबार, बच्चों की पढ़ाई, स्वास्थ्य आदि का हालचाल पूछा, कुछ उपदेश भी दिए। गुरु जी की मीठी-मीठी बातें सुनते हुए भी वह व्यक्ति मन ही मन कुढ़ता रहा कि यह विचित्र साधु है, मुझसे तो मीठी-मीठी बातें कर रहा है पर मेरी वस्तुओं का ऐसे अपमान कर दिया जैसे कि उनमें विष पड़ा हो। थोड़ी देर में वह भी चला गया। गुरु जी ने चेले से पुन: पूछा, क्यों भाई, यह तो प्रसन्न होकर गया ना? शिष्य ने कहा, नहीं महाराज, यह तो पहले वाले से भी ज्यादा क्रुद्ध था। कहता था, मेरी वस्तुओं का अपमान कर दिया। महात्मा बोले, तो सुन भाई, संसार में रहने का यह तरीका भी ठीक नहीं है। अब कोई और विधि सोचनी होगी। तभी एक और सज्जन वहाँ आ गये। वे भी कुछ फल और मिठाइयाँ ले आए थे जिन्हें गुरु जी के समक्ष रखकर बैठ गए। गुरु जी ने बहुत प्यार से उसके साथ बातें की। उन वस्तुओं को आश्रम में उपस्थित लोगों में बांटा। कुछ मिठाइयाँ तथा फल उस व्यक्ति को भी दिए, कुछ स्वयं भी खाए। उसके घर-परिवार की कुशलता की बातें की, सुंदर कथाएँ भी सुनाई। जब वह भी चला गया तो महात्मा ने पूछा, क्यों भाई, यह व्यक्ति क्या कहता था? शिष्य ने कहा, यह तो बहुत प्रसन्न था महाराज, आपकी बहुत प्रशंसा कर रहा था। कहता था, ऐसे संत से मिलकर चित्त प्रसन्न हो गया। महात्मा बोले, तो सुन बेटे, संसार में रहने का सही ढंग यही है।

संसार में कई लोग वस्तु, वैभव, साधन से बहुत प्रेम करते हैं, उनको पाने की लालसा में दिन-रात एक कर देते हैं। उन्हें पाने के लिए सद्गुण, सद्व्यवहार, सत्संग सब ताक पर रख देते हैं परंतु उनके दाता परमात्मा से कोई नाता नहीं रखते, पीठ मोड़कर बैठे रहते हैं। दूसरे वे लोग हैं जो परमात्मा से प्रेम करने का दम भरते हैं परंतु सृष्टि में उपलब्ध व्यक्तियों, वस्तुओं का सम्मान नहीं करते, उनसे घृणा करते हैं, उनके प्रति अपने कर्त्तव्य को पूर्ण नहीं करते, उनकी उपेक्षा करते हैं, उनके बारे में हीन धारणा रखते हैं। उपरोक्त दोनों ही तरीके गलत हैं। जीवन जीने का सही तरीका यह है

(शेष.. पृष्ठ 19 पर)

माँ, तेरे लिये मैं हूँ ना

• ब्रह्माकुमारी नागरतना, जयानगर (बैंगलोर)

एक बड़े घर में मेरा लौकिक जन्म हुआ। बचपन से ही मुझमें भक्ति के संस्कार थे। भगवद्गीता के अठारह अध्याय कंठस्थ थे। गीता स्पर्धा में बहुत इनाम लिये थे। ब्रह्मा बाबा से मुझे बहुत प्यार है क्योंकि मेरा लौकिक जीवन उनके लौकिक जीवन से बहुत मिलता है। मैंने भी उनकी तरह बारह गुरु किये थे। मैं भी उनकी तरह रोज़ गीता पढ़ती थी। परिवार व रिश्तेदारों में मेरा भी बहुत मान था। जैसे बाबा को भी बाल्यकाल में बहुत वैराग्य था लेकिन एक दिन 'सौभाग्य सुन्दरी' सिनेमा देखा तो शादी कर ली, ऐसा ही मेरे साथ भी हुआ। सत्रहरह वर्ष की आयु तक मुझे भी बहुत वैराग्य था। माता-पिता सोचते थे कि यह शादी नहीं करेगी लेकिन एक दिन मैंने भी एक भक्तिन का सिनेमा देखा, मेरा भी दिल बदल गया और शादी के लिए हाँ कह दी। बड़े घर की बहू बन गई। बड़े-बड़े साहूकार, व्यापारियों के मोहल्ले में घर था। सब सुख-सुविधायें थीं। काम करने के लिए नौकर थे। अनगिनत ज़ेवर मेरे पास थे, ज़ेवरों के नए-नए नमूने बदली-सदली करती रहती थी। बीस साल में डायमंड नेकलस के तीन नमूने बदली किए। यह बहुत महंगा होता है और कोई भी ऐसा करता नहीं है। बाज़ार में नई साड़ी का नमूना आता था तो सबसे पहले मेरे पास पहुँचता था। हफ़्ते में दो सिनेमा कम से कम देखती थी। दिन में एक वक्त, बाहर का बढ़िया खाना भी ज़रूर खाती थी। सुबह उठते ही दो घंटे पूजा-पाठ करती थी। विष्णु सहस्त्र नाम श्रद्धा से रोज़ गाती थी। इतना सब होने पर भी अंदर से महसूस होता था कि मुझे अभी और कुछ पाने का है।

ब्रह्माकुमारी संस्था में जाने वाले बहुत से लोग मेरे घर के आस-पास रहते थे, उन्हें देख मुझे नफरत आती थी। जब वे रास्ते में मिलते और ज्ञान की बातें सुनाते तो मुझे गुस्सा आता कि जब मैंने पूछा ही नहीं तो मुझे क्यों सुनाते हैं? फिर मैं सोचती, इनसे छिपकर दूसरे रास्ते से जाना चाहिए। कभी जब सामने आते दिख जाते तो यह सोचकर कि ये फिर ज्ञान सुनाएंगे, मैं रास्ता बदल लेती थी। इनके सफेद कपड़े और पूरी बाजू के ब्लाऊज मुझे ज़रा भी अच्छे नहीं लगते थे।

मैं कहती थी, मैं मर जाऊँ तो भी ब्रह्माकुमारी संस्था में पाँव नहीं रखूँगी लेकिन समय ने पलटा खाया और मुझे भक्ति से वैराग्य आने लगा। कारण यह था कि इतनी भक्ति करते हुए भी एक भी देवता का साक्षात्कार नहीं हुआ। मन में आया कि अब साकार को छोड़कर निराकार की उपासना करनी है। ऐसा सोचते समय शिवलिंग

मेरे सामने आया, शिव भोलेनाथ की तपस्या करूँ, यह विचार आने लगा। एक दिन पड़ोस में रहने वाली ब्रह्माकुमारी माता ने कहा कि अरे, हमारे यहाँ भी तो और कुछ नहीं करना, सिर्फ शिव को ही याद करना है। यह सुनते ही मेरे मन में 'याद', 'याद', 'याद' यह शब्द गूंजने लगा। आखिर मैंने फैसला किया कि ब्रह्माकुमारी संस्था में क्या सुनाते हैं, जाकर देखूँ तो सही। मैं माताजी और बड़ी बेटी को लेकर वहाँ गईं। सन् 1976, नवंबर मास, दीपावली के दिन थे। सात दिन में हम तीनों का एक साथ अलौकिक जन्म हो गया। सारा ज्ञान समझ में आ गया। फिर तो इतना नशा चढ़ा कि मन गाने लगा, 'पाना था सो पा लिया'। कुछ समय बाद नाते-रिश्तेदारों की तरफ से परीक्षाएँ आनी शुरू हो गईं लेकिन मैं अपने मार्ग पर अडिग रही। जब गुरुओं का गुरु परमसतगुरु मिल गया तो मैं उसकी आज्ञाओं को कैसे न मानूँ।

एक दिन बिस्तर पर लेटे-लेटे मैं बाबा से मन ही मन बातें कर रही थी। मैंने कहा, बाबा, मेरे ये तीन बच्चे तो सृष्टि रूपी नाटक के बच्चे हैं लेकिन आप तो मेरे असली बेटे हो। मैं ऐसा कह ही रही थी कि ज्योतिबिंदु शिव ने अपनी किरणों सहित मेरे मस्तक पर आकर मुझ आत्मा को गले से लगा लिया। यह साक्षात्कार या कल्पना नहीं है लेकिन सचमुच में बाबा ने मुझे गले लगाया और मेरा बेटा बन गया। आज जब भी मुझे यह अनुभव याद आता है, मेरा दिल भर आता है, आँखें गीली हो जाती हैं और अनुभव पुन: साकार हो उठता है।

उस दिन के बाद अपने तीन बच्चों को जो खिलाया, जो भी उन पर खर्च किया तो एक हिस्सा बाबा के लिए भी निकालकर रखती थी। बाबा बच्चे के नाम का फल, दूध, सब्जियाँ सेन्टर पर भेजती थी। एक दिन किसी कारण नहीं भेज सकी पर जब खाना खाने बैठी तो खाना अंदर ही न जाए, इतना बाबा के साथ बेटे का संबंध जुट गया। कपड़ा या अन्य चीज़ घर में आती थी तो भी एक हिस्सा निकालकर रखती थी। अब भी रोज़ भोग लगाते समय बेटे का संबंध बहुत अच्छे से अनुभव होता है। कभी-कभी जब मैं खाना बना रही होती हूँ तो बाबा बच्चा बनकर मेरे से पूछता है, माँ, मेरे लिए क्या बना रही हो? उस समय मुझे बहुत खुशी होती है। सारे दिन बेटे के संबंध की मस्ती में रहती हूँ। कितनी भाग्यवान हूँ मैं, सारी दुनिया को खिलाने वाला मुझे पूछता है!

कुछ समय के बाद मुझे अपने बच्चों सहित चैन्नई जाना पड़ा। रोज़ी बहन (दिवंगत) ने हमारे परिवार को बहुत अच्छी पालना दी। हम सदा उनके बहुत-बहुत आभारी रहेंगे। मेरी बड़ी लड़की उमा सेन्टर पर समर्पित हो गई। मेरे बेटे पवन कुमार को रोज़ी बहन ने अमेरिका भेज दिया जहाँ उसने मेहनत करके अच्छा पद प्राप्त किया। छोटी लड़की की शादी होने के बाद मैं भी अपने बेटे के पास अमेरिका चली गई। वहाँ भी सेन्टर पर जाती थी और बाबा की सेवा करती थी। उन दिनों आबू में ज्ञान-सरोवर का निर्माण कार्य चल रहा था। प्यारे बाबा ने मुरली में कहा था, सरोवर में अपना सब कुछ सफल करो। अमेरिका में जब मैंने बाबा की यह वाणी सुनी तो मुझे महसूस हुआ कि मेरे बेटे (शिव बाबा) का घर बन रहा है। मेरे पास जो भी कुछ है, मुझे उसमें सफल करना है। वीजा पूरा होने के बाद मैं भारत आई और सरोवर में डालकर मैंने भी अपना सब सफल कर लिया। इस प्रकार बाबा के साथ बेटे का रिश्ता और भी गहरा हो गया। बाद में लौकिक पुत्र ने मुझे अमेरिका बुलाने का बहुत प्रयास किया लेकिन मेरे शिव बेटे ने मुझे कहीं भी न भेज अपने पास सेवाकेन्द्र पर रख लिया। अब मैं बैंगलोर, जयानगर में राधे दादी जी के साथ रह रही हूँ। राधे दादी जी साकार बाबा के समय की आदिरत्न हैं। सेन्टर पर रहते मुझे अगर कोई परिस्थिति आ भी जाती है और मेरा थोड़ा भी संकल्प चलता है तो बाबा उसे बंद करा देता है और कहता है – 'माँ, तेरे लिए मैं हूँ ना!' ❖

जीवन जीने .... पृष्ठ 17 का शेष

कि हम अपने पिता परमात्मा को जानें भी, उनको याद भी करें, उनके प्रति दिल में स्थान भी रखें, ऐसा करते हुए भी संसार के कार्यों को कर्मयोगी की तरह संपन्न करें। सभी कर्त्तव्यों को पूर्ण करते भी ईश्वरीय गुणों को न भूलें। गुणों को साथ रखकर और गुणों को भूलकर कर्म करने में बहुत अन्तर है। जैसे एक व्यक्ति खेती कर रहा है पर मन क्रोधित है, अशान्त है, बैलों पर अत्याचार भी कर रहा है परंतु दूसरा व्यक्ति शांतचित्त, क्रोधमुक्त होकर बैलों को प्यार से चलाता हुआ खेती कर रहा है। अब काम तो दोनों ही कर रहे हैं परंतु पहले वाला, कर्म करते हुए भी विकारों में जकड़ा पड़ा है और दूसरा, कर्म करते हुए भी कर्म के बंधन से मुक्त आनन्दित है। पहले वाले के खाते में, मेहनत के बावजूद कुछ जमा नहीं हो रहा परंतु दूसरे के खाते में मेहनत के फल के साथ सद्गुणों का पुण्य भी जमा हो रहा है। अत: केवल कर्म करना महत्त्व की बात नहीं है वरन् सही मनोवृत्ति से, सद्गुणवृत्ति से कर्म करने पर ही पुण्य का खाता जमा होता है। ❖

जो डर गया वो मर गया

• ब्रह्माकुमार दिनेश, हाथरस

विद्वानों ने काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और आलस्य को षट् रिपु माना है। इसके बाद भय को स्थान दिया है। कहीं अपने लिए भय का भूत है तो कहीं दूसरों के लिए भय हथियार का रूप है। जिस प्रकार षट् रिपुओं को लोगों ने जीवन का अंग मानकर स्वीकार कर लिया है, उसी प्रकार दूसरों को डराकर उनसे काम निकालने के लिए भय को भी स्वीकार किया है। जो कार्य लम्बे समय से किसी की मक्कारी के कारण न बन रहा हो वह भय का भूत दिखाने पर चुटकियों में संभव होता देखा जाता है लेकिन परमप्रिय परमपिता शिव परमात्मा ऐसी पावन दुनिया दैवयुग (सतयुग) की स्थापना कराते हैं जहाँ सभी अभय होंगे, जिन्हें भय की अविद्या होगी। भय होता है पुराने किये गये दुष्कर्मों का या वर्तमान में हो रहे विकर्मों का।

जो डर गया वो मर गया

भय का भूत इंसान को जीते जी मार डालता है। मृत्यु से पहले ही वह कई बार मरता है। अधिकांश लोग जानते हैं कि आत्मा अमर है, समय आने पर पंच तत्वों का शरीर, पंच तत्वों में विलीन अवश्य होगा। शरीर की सुरक्षा ज़रूरी है क्योंकि आत्मा शरीर द्वारा ही कर्म करती है। मृत्यु अर्द्ध सत्य है, पूर्ण सत्य तो मृत्यु के बाद जीवन है।

एक संत ब्रह्ममुहूर्त में अपनी कुटिया में जागे हुए थे, बाहर उन्हें एक परछाई जाती हुई दिखाई दी। उन्होंने टोका तो परछाई ने प्रणाम किया और कहा, हे सिद्ध पुरुष, मैं मृत्यु हूँ, इस बस्ती में कल एक बीमारी फैलने वाली है, मुझे तीस लोगों को अपने साथ ले जाना है। अगले दिन ज़्यादा लोगों की मृत्यु हो गई। पूछताछ की गई तो मृत्यु ने उत्तर दिया, मैं तो तीस लोगों को ही लेने आई थी, बाकी लोग तो भय के कारण अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए। भुट्टो के सिर के सारे बाल, फाँसी की सज़ा सुनते ही एक सप्ताह में सफेद हो गये थे और जब तख्ते पर ले जाया जा रहा था तो दहशत के मारे वे गिर पड़े।

भय का भूत

छोटे बच्चों को यह कहकर डराना भी ठीक नहीं कि चुप हो जाओ नहीं तो हौवा आ जायेगा, भूत आ जायेगा, बन्दर आ जायेगा। साधु, डॉक्टर की सूई का भय दिलाना भी ठीक नहीं। जिन माताओं-बहनों के आगे ऑफिस में शेर जैसा बॉस भी चूहा बन जाता हो वे छोटे-से कॉक्रोच और चूहे से डर जाती हैं। इस देश की माताओं ने राम, कृष्ण जैसे देवात्मा पैदा किए; शिवाजी जैसे वीर बनाये; भगतसिंह और आज़ाद जैसे मौत को हँसकर गले लगाने वाले पैदा किये हैं; उन महान माताओं की वंशज होकर भी **आप छोटे-से चूहे, कॉक्रोच और छिपकली से डरती हैं, आश्चर्य लगता है! विरासत में मिला हुआ मनोबल कहाँ गया? अरे जिस देश का बालक शेर के दाँत गिनकर अपनी माँ को बताता था उस देश की संतानों को भूतों से, बन्दरों से नहीं डराओ, निर्भय और अभय बनाओ लेकिन उद्दण्ड नहीं। दीन-दुखियों, असहायों के हमदर्द, मददगार बनाओ, अत्याचारी नहीं।**

न डरो न डराओ

पाँच विकारों के कारण ही भय की उत्पत्ति हुई है। भयभीत इंसान को देखकर तो विकारी लोगों में और ही कई गुनी ताकत आ जाती है। शरीर तो एक दिन छूटना ही है पर सम्मान सहित छूटे वरना कीट-पतंगे तो रोज़ पैदा होते और मरते हैं। क्रोधी को भी शीतलता का दान दें, खुद निडर बनें। निन्यानवे का फेर कभी पूरा नहीं होगा। मोह बन्दर बना देता है इसलिए 'होगा वही जो राम रचि राखा' समझकर निर्भय रहें, सभी से प्रेम करें। अहंकारी की प्रतिष्ठा तो धूल में मिलनी ही है। कितने वीर और कितने धन कुबेर इस जहां में आये और यहीं वालों को सब कुछ देकर चले गये। नम्रता का भाव अपनाकर इस दुनिया से विदाई हो तो ज़्यादा अच्छा है।

आशंका भी उचित नहीं

भय की छोटी बहन है आशंका जो पहले आती है। कहीं ऐसा न हो जाये, कहीं वैसा न हो जाये, पता नहीं कल क्या होगा, ऐसे कैसे चलेगा इत्यादि आशंकाओं से जीवन की रफ़्तार ठहर जाती है। आत्मविश्वास की कमी होने के कारण विचार आता है कि कहीं कोई कुछ कह न दे, कहीं कोई चिल्ला न पड़े, कहीं कोई नाराज़ न हो जाये, यह कार्य कहीं बिगड़ न जाये, कहीं कुछ गड़बड़ न हो जाये। ऐसे संकल्प स्वयं की योग्यताओं पर संदेह होने से उत्पन्न होते हैं। ध्यान रहे, नेपोलियन ने बड़ी-बड़ी तोपें अल्पास की पहाड़ियों पर चढ़वा दी थीं। एक छोटी नेत्रहीन चींटी (चींटी के नेत्र नहीं होते) अपने से कई गुना वजन उठाकर अपने गंतव्य पर चल देती है। मिश्र के पिरामिडों पर लगे विशाल पत्थरों को इतनी ऊँचाई तक कैसे पहुँचा दिया गया, यह बात आज भी विश्व के महान आश्चर्यों में से है। दोनों टांगों से रहित धावक, छड़ से बनाये गये जूतों की मदद से रोम मैराथन को जीत लेता है और नारी शक्ति नाक पर ऑक्सीजन का सिलेन्डर लगाकर स्नातकोत्तर की परीक्षा दे सकती है, तो आप क्या नहीं कर सकते! आत्मबल जाग्रत होने पर हनुमान अथाह जलराशि को पार कर गये, पौराणिक ग्रंथ ऐसा मानते हैं। सत्य स्पष्ट करने का साहस भी तब आयेगा जब आत्मविश्वास होगा।

आत्मविश्वास जाग्रत करने के लिये –

1.सबसे पहले चाहिए आंतरिक सच्चाई और सफाई और सफलता मिलने तक जूझने की भावना।

2.एकाग्रता का अभ्यास। इसमें स्वयं को आत्म-स्मृति में स्थित करने का और निराकार ज्योतिस्वरूप परमात्मा पर मन को केन्द्रित करने का अभ्यास बहुत मदद करेगा।

3.घबराने से कुछ नहीं बनेगा। आत्मा की निष्पक्ष और निष्कपट आवाज़ को सुनें और कार्य करें तथा उसके बाद हर प्रकार के परिणाम को स्वीकार करने के लिए दामन खुला रखें।

भगवानुवाच है – 'निश्चयबुद्धि धूल को भी हीरे में बदल सकता है।'

बीते हुए कल का नाम भूत और आने वाले कल का नाम काल है, वर्तमान आपके पास है, उसे लगन और गंभीरता से जीयें, यही शुभ कामना है।

❖

सहृदयता व मिठास से भरपूर दादी मनोहर इन्द्रा जी

ब्रह्माकुमार रघुवीर, जालंधर

चार वर्ष पूर्व की बात है। डायमण्ड हाल में टोली वितरण चल रहा था। एक तरफ मनोहर दादी जी टोली दे रहे थे, दूसरी तरफ एक वरिष्ठ बहन जी टोली दे रहे थे। मैं बहन जी से टोली लेने वाली पंक्ति में था। मेरा मन हुआ कि दादी जी से भी टोली ली जाए। जब दादी जी की तरफ गया तो उन्होंने यह कहकर मना कर दिया कि आपको टोली मिल चुकी है। मेरे मन में कुछ-कुछ हुआ कि दादी जी ने मुझे मना क्यों कर दिया। उसी दिन हमारी वापसी यात्रा थी। रास्ते भर विचार चलते रहे कि दादी जी ने टोली क्यों नहीं दी। लगभग आधी यात्रा पूरी होने को थी, मुझ से रहा नहीं गया। मैंने निमित्त (गाइड) बहन के सामने दिल खोला, देखो बहन जी, दादी जी से टोली माँगी थी ..। इतना ही कह पाया था कि बहन जी ने कहा, ओह रघुबीर भाई, आपकी टोली दादी जी ने मुझे दी है और टोली मेरे हाथ पर रख दी। मेरी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। मेरे से कुछ बोला नहीं गया। बहन जी ने कहा, बड़े समय तक अपने पास संभाल कर रखी है यह टोली। मुझे समझ में आ गया कि दादी जी ने उस समय इसलिए मना किया था ताकि नियम न टूटे और बहन जी के पास इसलिए टोली भेज दी कि भाई का दिल न टूटे। ऐसे स्टील की तरह नियम-मर्यादा के पक्के व मक्खन की तरह नर्म थे दादी जी। जब भी कभी इस घटना की याद आती है तो आँखें नम हो जाती हैं और दादी जी के आगे नतमस्तक हो जाता हूँ। ❖

कैसे बनें ब्रह्मा बाप समान

अध्यात्म की सर्वोच्च स्थिति है भगवान के समान गुणों वाला बनना। लोगों ने तो यह भी सोचा कि हम भगवान बन जाएँ परन्तु यह सम्भव नहीं है क्योंकि अनादि रूप से ही आत्माएँ व परमात्मा अलग-अलग हैं। परमात्मा, आत्माओं के परमपिता हैं, आत्माएँ कभी परमपिता नहीं बन सकतीं परन्तु परमपिता समान बन सकती हैं। यह महान उपलब्धि सर्वप्रथम प्राप्त की प्रजापिता ब्रह्मा ने। प्रस्तुत हैं ब्रह्मा बाबा की महानताएँ ताकि बाप समान बनने के मुमुक्षु अपनी साधना में तीव्रता ला सकें।

इस धरा पर सर्व महान तपस्वी थे ब्रह्मा बाबा। वे चलते-फिरते पवित्रता के फ़रिश्ते थे। जब यज्ञ में बेगरी पार्ट आया, यूँ कहें कि उनकी अग्नि परीक्षा हुई तो वे खरे सोने बन कर चमके। अनेक विघ्न,समस्याओं में वे पर्वत की तरह अचल-अडोल रहे। मान-अपमान, सुख-दुख, निन्दा-स्तुति आदि में सबने उन्हें अप्रभावित देखा। अहं उन्हें कभी छू नहीं पाया। अपनी साधनाओं के बल से वे सम्पूर्ण जितेन्द्रिय बने। त्याग में तो कोई उनकी समता कर ही नहीं सका। त्याग का भी त्याग करके वे निर्मल व निश्छल बन गये थे। उनके मस्तक पर अलौकिक तेज झलकता था। उनकी दृष्टि से शक्तिशाली तरंगें प्रवाहित होती अनुभव होती थीं। जिन पर भी वे दृष्टि डालते थे, वे व्यक्ति कुछ समय के लिए विदेही हो जाते थे। कुछ विधि लिख रहे हैं उन जैसा बनने की –

साक्षीपन व स्वमान की सीट पर बैठें

भगवानुवाच – 'जैसे मैं इस विश्व-नाटक को साक्षी होकर देखता हूँ, वैसे ही तुम भी देखो तो तुम बाप समान बन जाओगे।' यही अभ्यास ब्रह्मा बाबा ने किया। साक्षीपन की सीट व स्वमान की सीट अर्थात् दोनों का अभ्यास आत्मा को निश्चिंत, निर्विकल्प व निर्भय बना देता है। यह विश्व एक सुन्दर नाटक है। यहाँ सब कुछ वही हो रहा है, जो कल्प पहले हुआ था। यहाँ सभी का अपना-अपना भाग्य है । इस विशाल ड्रामा के ज्ञान का चिन्तन करते हुए हम क्या-क्यूँ के प्रश्नों से मुक्त होकर साक्षी हो जाएँ। परन्तु साक्षीभाव का यह अर्थ नहीं कि हम कर्म न करें, कर्त्तव्य न करें या ज़िम्मेदारी न निभायें। ये सब भी साक्षीभाव व निमित्त भाव से करें।

आँखें खुलते ही संकल्प करें कि मैं बाप समान हूँ। फिर चिन्तन करें कि मैं बाप समान हूँ तो मुझे कैसा होना चाहिए? मैं बाप समान हूँ तो मुझे सम्पूर्ण निरहंकारी व निर्विकारी होना चाहिए। मैं ब्रह्मा बाबा जैसा हूँ तो मैं क्रोध नहीं कर सकता, मैं कटु वचन नहीं बोल सकता। अब मुझे

• ब्रह्माकुमार सूर्य, माउंट आबू

अति रॉयल, दाता व नम्रचित्त बनना है, मुझे निमित्त भाव बढ़ाना है, अब मैं किसी के लिए ईर्ष्या-द्वेष, बदले की भावना, घृणा या वैरभाव भला कैसे रख सकता हूँ? अमृतवेले का यह चिन्तन हमें तीव्रता से इस सर्वोच्च लक्ष्य की ओर ले जाएगा।

महान त्याग व भविष्य की स्मृति रहे

त्याग के बिना कोई भी महान नहीं बन सकता। त्याग में ही तेज है और त्याग से ही तपस्या सरल होती है। यहाँ हम स्थूल त्याग की बात नहीं कर रहे हैं यद्यपि ब्रह्मा बाबा का स्थूल त्याग भी अति प्रशंसनीय व अनुपम था, उन्होंने सर्वस्व समर्पण किया। हम भी यह समर्पण भाव अपना लें कि सब कुछ तेरा। यह तन भी तेरा, धन भी तेरा दिया हुआ। मेरा हर कर्म तुम्हारे लिए, कर्म का परिणाम भी तुझको अर्पित, परिवार भी तेरा। हम सबकी जीवन नैया तेरे हवाले, मन को भी अर्पित करने की साधना करें। यह मैं और मेरा ही तो अध्यात्म-पथ की मुख्य बाधा है। यदि हम निमित्त भाव धारण कर लें तो जीवन में महानता व अलौकिकता आ जाती है। दूसरा त्याग हम करें कर्मेन्द्रियों के रसों का व तीसरा त्याग हो मान-शान की इच्छा का। अनावश्यक इच्छाओं को तिलांजली दे दें तो हम स्वयं में मग्न हो जाएँगे।

ब्रह्मा बाबा को अपने सतयुगी भविष्य की स्मृति व नशा अत्यधिक था मानो वे इस वृद्ध शरीर में तो निमित्त मात्र ही रह रहे थे। भविष्य श्री कृष्ण की छवि उनके नयनों में सदा समाई रहती थी, वैसे ही हम भी अपने आदि अर्थात् सतयुगी भविष्य के देव स्वरूप को सम्मुख लाया करें तो हमारे अन्दर देवत्व प्रवेश करने लगेगा।

अचल स्थिति व अटल विश्वास हो

निराकार शिव ने जैसे ही ब्रह्मा बाबा द्वारा रुद्र यज्ञ रचा, उसमें विघ्न पड़ने प्रारम्भ हो गये। जो मित्र थे, वे शत्रुवत् व्यवहार करने लगे। जो अपने थे, वे पराये हो गये; जो प्रशंसक थे, वे खुलेआम ग्लानि करने लगे व गाली देने लगे। परन्तु ब्रह्मा बाबा ने अवतरित हुए सर्वशक्तिवान को पहचान लिया था। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि उस महाशक्ति द्वारा रचा गया यज्ञ, किसी भी विघ्न से रुक नहीं सकता। अत: वे अचल-अडोल थे।

हम भी यदि उन जैसा बनना चाहते हैं तो ज्ञान-योग के बल से स्वयं की स्थिति को सुदृढ़ चट्टान-सी बनायें। **छोटी-छोटी परीक्षाओं में हिल कर अपने मनोबल को हीन न होने दें। बड़ा पद लेना है तो बड़ी परीक्षाएँ तो देनी ही पड़ेंगी। भगवान यदि हमारे हाथों में स्वर्ग का राज्य सौंपना चाहता है तो वह हमारी कड़ी परीक्षा तो लेगा ही। वह अवश्य परखेगा कि हम विचलित तो नहीं होते, हम भयभीत तो नहीं होते, क्या हम विपरीत परिस्थितियों का सामना शक्तिशाली होकर करते हैं?**

जो संस्कार बाबा के वही हमारे हों

जिन्होंने उन्हें देखा तो पाया कि उनके मन में विरोधियों के प्रति भी कल्याण की भावना थी। वे सचमुच परमात्मा के प्रत्यक्ष स्वरूप, सुखों के दाता थे। वे इस संसार से पूर्ण उपराम व अनासक्त थे। चाहे बात खान-पान की हो या मान-सम्मान की - वे सबमें ही उपराम थे। कर्मातीत होने के लक्ष्य के आगे शेष सब कुछ पीछे छूट गया था। हज़ारों लोग घनिष्टता से उनके सम्बन्ध-सम्पर्क में आये, कोई नहीं कह सकता कि उन्होंने बाबा को कभी तनाव में देखा हो। वे बड़े सरल स्वभावी, विनोदी व मधुरभाषी थे। हल्के रहने के व हल्के करने के उनके संस्कार अद्वितीय थे।

जैसे बोल उनके थे वैसे ही हमारे भी हों

वरदानी थे उनके बोल, नम्रता से भरपूर होते थे उनके बोल। प्रेम से भरे होते थे उनके बोल। उनके बोल महावाक्य बन गये, उनकी वाणी आनन्द देने वाली वीणा बन गई। उनके बोल लाखों-करोड़ों के लिए प्रेरणा बन गये। उनके वचनों ने कितनों को नवजीवन दिया, कितनों की निराशा को लोप किया, कितनों को सत्य राह दिखाई और कितनों की बुद्धि के कपाट खोले।

आह, कैसे थे उनके अनमोल बोल! हर व्यक्ति इन्तज़ार करता था कि वे उन्हें कुछ कह दें। उनके बोल सुनकर अनेकों का जीवन खुशी से भर गया, कितने ही परमात्म-प्रेम में मग्न हो गये, कितनों के दुखों के आँसू थम गये। ऐसे ही हम भी बोलें। हमारे बोल ब्रह्मा बाबा की याद दिलायें, हमारे बोल कलह-क्लेश मिटायें। हमारे बोल भी महावाक्य बन जाएँ। हम ऐसे स्वमान के बोल बोलें जो सबके अभिमान नष्ट हो जाएँ।

जैसे कर्म ब्रह्मा बाबा के वैसे ही हमारे हों

निमित्त भाव व निष्काम भाव से कर्म करते हुए वे कर्मातीत हुए। सकाम भाव से किये गये कर्म मनुष्य को बाँधते हैं। ''मैं करता हूँ, मैं यज्ञ का मालिक हूँ'' – इस मैंपन से वे सदा ही मुक्त थे। हम भी ईश्वरीय सेवा करते हुए, सेन्टर सम्भालते हुए या लौकिक कर्म करते हुए मैंपन से मुक्त होकर कर्म करें। उनके कर्म अलौकिक थे क्योंकि वे लौकिक भाव त्याग कर एक तरफ हो गये थे। हम भी लौकिक में अलौकिक दृष्टि पैदा करें। यह मेरा परिवार है, इसकी पालना करना मेरी ज़िम्मेदारी है, ये मेरे बच्चे हैं – इस लौकिक भाव को बदल दें तो हमारे कर्मों में भी अलौकिकता आ जाएगी। महत्त्व इस बात का नहीं कि हम क्या कर्म करते हैं, महत्त्व तो इस बात का है कि हम

किस भावना से कर्म करते हैं।

बाबा के पास यह भाव था कि मैं जो कुछ भी करता हूँ, परमात्म-अर्थ। **समर्पण भाव से उन्होंने हर कर्म किया। कोई भी कर्म अपने लिए नहीं। हम भी ऐसा ही भाव अपनायें। वे कर्म करते थे और ऐसे उपराम हो जाते थे जैसे कि उन्होंने कुछ किया ही न हो। वे सच्चे कर्मयोगी, कर्मवीर थे जो विदेही अवस्था में योगयुक्त होकर कर्म करते थे। उनके कर्म हमारे लिए दर्पण बन गये। हम भी कर्मों में महानता लायें ताकि हमारा प्रत्येक कर्म भी दूसरों पर अलौकिक छाप छोड़े।**

जो उनकी वृत्ति वही हमारी हो

उनकी वृत्ति में था कि सब मेरे बच्चे हैं। हमारी वृत्ति में भी हो – यह विश्व हमारा परिवार है। उनके संकल्प महान थे, संकल्पों में कहीं भी ढीलापन, अलबेलापन या प्रमाद नहीं था। बुजुर्ग होते हुए भी वे मन से युवक थे, उनके मन में सदा उमंग-उत्साह की लहरें उमड़ती रहती थी। वे बड़े चुस्त, एक्यूरेट और समय के पाबन्द थे। बूढ़े व बीमार होकर वे सोये हों, यह कभी किसी ने नहीं देखा, यह उनके दृढ़ संकल्पों का ही सूचक था। उनके मन में सारा दिन ज्ञान का चिन्तन चलता था। ज्ञान-मनन में मग्न रहने वाले वे सदा विष्णु समान, सुख-सागर की लहरों में आनन्दित थे। हम भी अपने चिन्तन को उन जैसा ही बनायें।

जो बाबा की धारणाएँ थीं वही हमारी हों

इच्छा मात्रम् अविद्या, सभी के प्रति शुभ-भावनाएँ, सहनशीलता की प्रतिमूर्ति, निर्भयता, सम्पूर्ण निर्विकारिता, सम्पूर्ण सत्यता, देह की व्याधियों से अलिप्त व सम्पूर्ण निरहंकारी – इन आठ मुख्य धारणाओं से शृंगार किया था उन्होंने अपना। बड़ा ही निर्मल हो गया था उनका चित्त। सब बोझों से मुक्त होकर वे इतने हल्के हो गये थे कि चलते-फिरते फ़रिश्ते दिखाई देते थे।

हम भी इच्छाओं की गुलामी छोड़ दें। स्वयं में सहनशीलता का आह्वान करें। परम सत्य को पाकर सत्यता की चेतन मूर्ति बन जाएँ। सर्वशक्तिवान का साथ मिला है तो भय मन के किसी भी कोने में छुपा न रह जाए। सम्पूर्ण चन्द्रमा की तरह सबको अपनी ओर आकर्षित करने वाले सम्पूर्ण पवित्र बनें और अहं के विष को पूर्णतया छोड़ दें। बस बन जाएँगे हम बाप-समान।

हे सत्य पथ के राहियो, हे पवित्रता से आभूषित महान आत्माओ, अपने को जागृत करो। समय नाजुक आता जा रहा है, कहाँ व्यस्त हैं आप? उठो, भगवान तुम्हारी ओर निहार रहा है। उसे तुम्हें जग को दिखाना है, तुम्हारे द्वारा जग-कल्याण करना है, जग के दुख मिटाने हैं, मानव को देव बनाना है। जो भी ब्रह्मा-वत्स अब अपनी गति को तीव्र कर सकते हैं, उन्हें अवश्य कर देनी चाहिए। अपने मन-बुद्धि को उमंग-उत्साह से भरो कि सर्वप्रथम मुझे ही अपने परमपिता की श्रेष्ठ इच्छाएँ पूर्ण करनी हैं।

❖

शिव का अवतार देखा है

ब्रह्माकुमार श्रवण, जमशेदपुर

ब्रह्मा तन में शिव का अवतार देखा है
साक्षात्कार की बात नहीं साकार देखा है

कल्प के अंत में जब दुखी थे सब प्राणी
आकर बाबा ने बरसाई अमृत वाणी
खुशियों का लुटाते उन्हें अंबार देखा है
साक्षात्कार .....

खुद को भूला यह जग और खुदा भुलाया
यथार्थ परिचय देने अब शिव है आया
बाँटते ज्ञान-रत्नों का उन्हें भण्डार देखा है
साक्षात्कार .....

माँगती है दुनिया जिससे भीख प्यार की
चाहती है देखना झलक बस एक बार की
हमने तो खुद करके उससे प्यार देखा है
साक्षात्कार .....

कितनी सदियों से भटक रही दुनिया सारी
लुट गई पवित्रता के साथ सुख-शांति सारी
करते स्थापना उन्हें सतयुगी संसार देखा है
साक्षात्कार .....

जपते हैं कुछ मालायें गुफाओं में
तपते हैं कुछ काम-अग्नि की चिताओं में
हमने तो उनसे बरसते शीतल फुहार देखा है
साक्षात्कार .....

भक्त से ज्ञानी बनने का सफर

• ब्रह्माकुमार प्रह्लाद, टोंक (राज.)

जब मैं चौदह वर्ष का था तब एक दिन मैंने लौकिक पिताजी के पिताजी (बाबा) से पूछा कि इस संसार की रचना किसके द्वारा कब की गई। उन्होंने कहा, क्षीर सागर में विष्णु भगवान की नाभी से ब्रह्मा जी निकले और उन्होंने संसार की रचना की किंतु कब और कैसे की, इसका जवाब उनके पास नहीं था। बाल अवस्था से ही मेरी व्रत, पूजा-पाठ, नियम-पालन, सत्संग व समाज सेवा में रुचि थी। ईश्वर प्राप्ति की भी इच्छा बनी रहती थी। ईश्वर मिलन की इच्छा से दो देहधारी गुरु भी किये। एक गुरु ने मुझे आसन, प्राणायाम, त्राटक जैसी क्रियायें व तत्वज्ञान सिखाया। दूसरे गुरु ने 'ओम नमो शिवाय' का मंत्र सुबह-शाम उच्चारण करने को कहा।

एक बार, कुछ भक्तजनों के साथ मेरा व युगल का वृंदावन, गोकुल गाँव, बरसाना घूमकर आने का कार्यक्रम बना। वहाँ से मैंने श्रीमद्भगवद् गीता की एक प्रति खरीदी, इस उद्देश्य से कि गीता में क्या लिखा है, अध्ययन करके देखेंगे। गीता जी में, अर्जुन व भगवान के संवाद में लिखा पाया कि मेरे से भक्त लाखों कोस दूर हैं, मैं सर्वोच्च पिताओं का पिता, गुरुओं का सतगुरु, पतियों का पति केवल आत्मज्ञानियों से ही मिलता हूँ; माला, मंत्र, यज्ञ, जप, दान, हवन से नहीं। यह पढ़कर एक बात बुद्धि में घर कर गई कि अगर परमात्मा से मिलना है तो आत्मा का ज्ञान ज़रूरी है और वह पतियों का पति कैसे है, यह जानना भी ज़रूरी है। मैंने इस संबंध में अनेक संत, महात्माओं से संपर्क किया लेकिन किसी से संतोषप्रद जवाब नहीं मिला।

पतियों का पति मिला

शास्त्रों व रामायण का थोड़ा बहुत ज्ञान होने व सत्संगों में रुचि होने के कारण लोग मुझे भक्त जी कहकर पुकारा करते थे। मैं दुनिया की निगाह में अच्छा भक्त तो था लेकिन भगवान को ढूँढ़ रहा था। वर्ष 1996 के अगस्त माह की बात है, देह की पत्नी ने पूछा, क्या आप परमात्मा को जानते हो? मैंने कहा, जानना चाहता हूँ। उन्होंने कहा, कल मेरे साथ चलना। मैंने कहा, ज़रूर चलूंगा। वह मुझे निवास स्थान के पास में ही संचालित प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय में ले गई, जहाँ वह पिछले पाँच महीनों से जा रही थी। वहाँ पर ब्रह्माकुमारी बहन जी ने पहले दिन मुझे आत्मा व शरीर का सत्य ज्ञान दिया। मुझे लगा कि जिस ज्ञान की आवश्यकता थी वह तो यहाँ ही मिल रहा है। दूसरे दिन, निराकार परमात्मा शिव की सत्य पहचान व आकारी देवता शंकर तथा शिव का अंतर स्पष्ट किया। तीसरे दिन कालचक्र व 84 जन्मों की सत्य कहानी सुनने को मिली। इस प्रकार सात दिन के आध्यात्मिक ज्ञान से जीवन के सारे रहस्यमय प्रश्नों का हल मिल गया। साप्ताहिक कोर्स करने के बाद मुझे परमात्मा के सीधे महावाक्य (मुरली) सुनने को मिलने लगे। **इन महावाक्यों को सुनकर लगने लगा कि मैं इस शरीर में, आत्मा रूप में, परमात्मा (साजन) की सजनी हूँ, मैं किसी का पति नहीं, बल्कि मेरा पति भी स्वयं निराकार परमात्मा शिव ही है। यह देह की पत्नी तो आत्मा रूप में मेरी सखी है। दोनों का साजन तो एक शिव बाबा ही है। मुझे यह अहसास हुआ कि मुझे पतियों का पति परमात्मा शिव मिल गया। वही मेरा सच्चा परमपिता, परमशिक्षक, परमसतगुरु भी है।** उनसे मेरे अविनाशी संबंध हैं। परमात्म मिलन की तीव्र इच्छा के कारण, आबू जाने की लगन लग गई परंतु बहन जी ने एक वर्ष बाद ले चलने की बात कही। मुझे यह एक वर्ष सदियों समान लगने लगा।

आग-कपास एक साथ

चार-पाँच दिन बाद रक्षाबंधन का पर्व था। माउंट आबू से दादी

रत्नमोहिनी जी आई हुई थीं। उन्होंने रक्षाबंधन का आध्यात्मिक रहस्य समझाया तो सहज समझ में आ गया। अब हम दोनों सखियाँ आत्म-ज्ञान प्राप्त करके सहज रीति से पवित्र रहने लगे। सात्विक भोजन करने लगे। अनेक दिव्य अनुभूतियाँ करने लगे। कहाँ तो घर के एक कोने में मंदिर था परंतु अब तो सारा घर ही सेवाकेंद्र, मंदिर व तीर्थ बन गया। घर के बाहर लिख दिया गया – 'रूहानी हॉस्पिटल'। साथ में यह भी लिखा कि 'यहाँ सात दिन में, निःशुल्क रूहानी लेजर किरणों द्वारा, बिना शल्य चिकित्सा के काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार जैसी महाबीमारियों का सफल ऑपरेशन किया जाता है।' दुनिया वाले कहते हैं कि आग और कपूस एक जगह नहीं रह सकते किंतु हम ईश्वरीय नशे से कहते हैं कि ऐसा रहना सहज है क्योंकि अब हम दोनों आत्मा रूप में सखियाँ हैं और दोनों का पिता एक ही परमात्मा शिव है। ज्ञान से पहले मुझे दैहिक पत्नी से तुलसीदास वाला शारीरिक प्रेम था। उसके बिना रह नहीं सकता था। दैहिक सुंदरता को देख मन अन्यों के प्रति भी विकारी हो जाता था, लेकिन जैसे ही आत्म-ज्ञान और परमात्म-ज्ञान मिला, मन सहज भाव से पवित्र हो गया। घर में सखी, बाबा (साजन) की याद में भोग बनाती है और मैं गुणों से सज-धज कर बाबा (साजन) को भोग स्वीकार कराती हूँ। दोनों सखियाँ क्षीरखंड होकर मिलजुल कर रहते हैं। खुदाई खिदमतगार बन याद और सेवा में रहते हैं।

अब तो मैं अपनी इस सखी (युगल) का दिल से धन्यवाद करता हूँ जो मुझे अविनाशी साजन शिव बाबा से मिलाने के निमित्त बनी। साजन शिव बाबा का तो लाख-लाख शुक्रिया जिनको पाकर मैंने जहान तो क्या आसमान भी पा लिया। अब तो दिल से निकलता है, वाह भाग्य विधाता और वाह मेरा भाग्य, वाह मैं!

पाठकगण को शुभ भावना, शुभ कामना भरा यही संदेश देना चाहता हूँ कि अब भी समय है, देर ज़रूर हुई है लेकिन टू-लेट का बोर्ड नहीं लगा है। **अब यह सृष्टि रूपी खेल पूरा होने को है, महाविनाश सामने खड़ा है। यह वही गीता-महाभारत युग है। अब सबको वापिस घर जाना है। अतः बीती को बिंदी लगाकर, स्वयं को बिंदी (आत्मा) समझकर, बिंदी (परमात्मा) से सर्व संबंधों का रस लेकर सर्वप्राप्ति स्वरूप बनो। याद रखें, अभी नहीं तो फिर कभी नहीं।** अपने समीप के ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय में पहुँचकर दाता परमात्मा से अपना खोया हुआ मुक्ति-जीवन्मुक्ति का वर्सा पा लो, पावन नयी सतयुगी श्रेष्ठाचारी दुनिया में आने का अधिकार पा लो। ❖

अपने आँचल में फिर भर लो

कमल-पुष्प सी पावनता
नूरे गुलाब-सी शान लिये
बेला जैसी रूहानियत व
रूहों का सम्मान लिए

आँखें स्नेह भरी सरिता हैं
बहती रहती पावन करती
मुख से झरते ज्ञान-रत्न
बच्चों की झोली पल में भरती।

लगती काली, दुर्गे, अम्बे
अपनी प्यारी माँ जगदम्बे।।

ऐसी हंसवाहिनी हे माँ
श्रद्धा सुमन हमारे ले लो
एक बार माँ आकर के
अपने आँचल में फिर से भर लो।

अमृतपान कराके हे माँ
पुरुषार्थ में अव्वल कर दो
जैसी तुम परमात्म लाड़ली
वैसी मुझको भी तो कर दो।

'हुकमी हुक्म चलाता है' बस
इसी पाठ में पक्का कर दो
'हाँ जी' करके पार्ट बजाऊँ
ऐसी स्मृति मुझमें भर दो।

जो दे दें वापिस फिर ना लें
ऐसे करम हमारे कर दो
एक बार फिर आकर के माँ
अपने आँचल में फिर भर लो।।

– ब्रह्माकुमारी ऋतु मंजरी
मण्डावली (दिल्ली)

ईश्वरीय दूत थीं निर्मला बहन

अपने चलन और चेहरे से परमात्मा का संदेश देने वाली ब्र.कु. निर्मला बहन सिद्धिस्वरूपा, दूरंदेशी, ममतामयी तथा तपोनिष्ठ थीं। आप ईश्वरीय दूत थीं। हर पल ईश्वर का संदेश देना, एकता, अखण्डता और वैश्विक सौहार्द के लिए प्रयत्नशील रहना आपके व्यक्तित्व में शुमार था। आपका जन्म सन् 1929 में उ.प्र. के खुर्जा शहर में हुआ। बचपन से ही परमात्मा की सेवा करना आपका पहला लक्ष्य था। सन् 1955 में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के संपर्क में जब आईं तो प्रजापिता ब्रह्मा बाबा के व्यक्तित्व की जीवन पर ऐसी छाप पड़ी कि आप सन् 1957 में इस संस्था में परिवार सहित समर्पित हो गईं। लौकिकता से निकल

अलौकिकता की मिसाल बनते हुए आपने सैकड़ों परिवारों को आध्यात्मिकता से सींचने का महान कार्य किया। जब आप ईश्वरीय सेवा में आईं तब यज्ञ बेगरी पार्ट से गुज़र रहा था पर आपके त्याग ने अपना रंग दिखाया। आपके लौकिक भाई आई.ए.एस. ऑफिसर और पति एक बड़े अधिकारी थे। आप ग्रेजुएट थीं। इतने संपन्न परिवार से होने के बावजूद भी आप त्याग और सेवा की राह पर निकल पड़ीं। उत्तर प्रदेश के कानपुर, बनारस तथा पंजाब के कई स्थानों पर ईश्वरीय सेवाओं के बाद सन् 1965 में आप जयपुर आईं और तब से लेकर अंतकाल तक जयपुर सबजोन के अंतर्गत 45 सेवाकेन्द्रों तथा उपसेवाकेन्द्रों का कुशल संचालन करती रहीं। ईश्वरीय सेवाओं में संकल्प, श्वास सफल करते हुए दिनांक 25 फरवरी, 2009 को प्रात: 1.30 बजे पुराने शरीर का त्याग कर विश्व परिवर्तन की भावी ईश्वरीय सेवा-योजनाओं के लिए आपने अव्यक्त आरोहण किया। हम सर्व ब्रह्मावत्सों की ओर से आपको अलौकिक श्रद्धांजलि स्वीकार हो!!!

व्यंग भरी बातें समर्पित कर दीं

मेरा मधुबन (आबू) जाने का कार्यक्रम बना, उन दिनों मेरे युगल की तबीयत बहुत खराब थी। पैसे की कमी होते भी, सेन्टर की निमित्त बहन ने किसी तरह मेरा जाने का प्रबंध किया था। घर के सभी लोग मेरे जाने का विरोध कर रहे थे पर मैंने बाबा को मन-ही-मन पकड़े रखा और मधुबन पहुँच गई। मैं पहली बार गई थी। पहली बार मिलने वाले बच्चों को बापदादा ने पर्सनल वरदान दिया – 'अमर भव' और यह स्मृति पक्की करने को कहा, अमर बाप का बच्चा हूँ, अमर पद को प्राप्त करने वाली आत्मा हूँ। मधुबन में समय पँखों पर उड़ गया। आते वक्त ऐसा लगने लगा जैसे कुछ पीछे छूट रहा है। जब मथुरा आई तो युगल की शारीरिक हालत ज़्यादा बिगड़ चुकी थी। कुछ समझ नहीं आ रहा था। कभी डाक्टर को दिखायें, कभी किसी और को, लोग शंका करने लगे। दवाई के लिए पैसे न होने पर और बीमारी को ठीक से न समझ पाने के कारण स्थिति ज़्यादा उलझती जा रही थी पर मधुबन से आते वक्त बापदादा ने इतनी हिम्मत भर दी कि मैंने सब परिस्थितियाँ बाबा के हवाले कर दीं। लोगों की व्यंग भरी बातें और नज़रें बाबा को समर्पित कर मैं बेफ़िक्र हो गई। तभी बाबा ने किसी आत्मा को निमित्त बना कर नि:शुल्क दवाइयों की व्यवस्था कर दी। आज युगल पूर्ण रूप से स्वस्थ हैं। स्वस्थ होकर कहने लगे, बाबा की कमाल है। आर्थिक समस्यायें तो फिर भी आईं परंतु बाबा ने हर पल प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से साथ का अनुभव कराया। मैं किन शब्दों में बाबा का शुक्रिया अदा करूँ!

– नेहा बच्चानी, मथुरा

रिश्तों की गरिमा – एक निरीक्षण

• डॉ. अजीत सिंह राणा, रोहतक

(परमपिता परमात्मा का गरीबी के संबंध में सूत्र महावाक्य है – ''चरित्र की गरीबी ही भौतिक गरीबी का मूल कारण है।'' इस परिप्रेक्ष्य में खास भारत की ओर खोजी निगाहों से देखने पर यह तथ्य सामने आता है कि जगतगुरु, विश्व का सिरमौर और परमपावन देवभूमि के नाम से जाना जाने वाला यह देश आज चारित्रिक गरीबी के छोरहीन अंधकार में कसमसा रहा है। चरित्र अर्थात् आत्मा रूपी चेतन सत्ता में इत्र (गुणों) की खुशबू। परन्तु, यह कैसा हृदयविदारक दृश्य है कि घर रूपी मन्दिर में रहने वाले विभिन्न आत्मीय जनों के आपसी रिश्तों को अशुद्धि की दीमक चाटती जा रही है। परमपिता परमात्मा से मिले सद्विवेक के आधार पर लेखक के मन में जिन बातों ने हलचल मचाई है, उन्हें नम्रतापूर्वक यहाँ रखा गया है। यह लेख शोधपरक तथ्यों पर आधारित है। यह लेखक के निरीक्षण, अनुभूतियों तथा सामाजिक व्यवस्था में विषय-वासना व काम-विकार संबंधी हो रही दुर्घटनाओं की जानकारी का निचोड़ है। पतित होने का मापदण्ड इस बात से लिया गया है कि लोग समाज द्वारा मान्यता प्राप्त (वैध) काम-वासना में तो डूबे पड़े ही हैं, अवैध वासना से भी अन्तरात्मा का दम घोट रहे हैं। लेखक कोई अंग्रेजी भाषा की पैरवी नहीं कर रहे हैं परन्तु पवित्रता के परिप्रेक्ष्य में, ठीक शब्दों के प्रयोग को ठीक कहने का मात्र साहस कर रहे हैं। आशा है पाठकगण उनकी भावनाओं को सही रूप में समझेंगे और सत्य को आत्मसात् करने में तत्परता भी दिखायेंगे – संपादक)

भारत देव भूमि, ऋषियों व तपस्वियों की भूमि, दयानन्द व विवेकानन्द की भूमि रही है। विश्वविख्यात नालन्दा तथा तक्षशिला विश्वविद्यालयों के कारण भारत को प्राचीन काल से ही न केवल शिक्षा के क्षेत्र में बल्कि आध्यात्मिक क्षेत्र में भी विश्व का मार्गदर्शक माना गया है। उपरोक्त कारणों से भारत में लोगों का खान-पान भी अपेक्षाकृत शुद्ध व सात्विक रहा है। देखा व सुना गया है कि ब्रिटेन व अमेरिका आदि देशों में लोग ज़्यादा मदिरापान व माँस खाते-पकाते रहे हैं। ऐसे में कोई कहे कि यह भारत ही सबसे पहले तथा ज़्यादा पतित व भ्रष्ट बनता है (भारतीय समाज का एक बड़ा भाग भी इस मत का पक्षधर है) तो यह बात कुछ अविश्वसनीय व भेदभावपूर्ण प्रतीत होती है। यदि ऐसा है तो क्यों है? इसलिए इस लेख का उद्देश्य मुख्यत: यह जाँच करना भी है कि वे कौन-से कारण हैं जो भारत ही सबसे पहले व अधिक पतित बना तथा यह भी देखना है कि भारत कहाँ तक पतित बन गया है। इसके दुष्प्रभाव क्या हैं तथा इसको और अधिक पतित होने से कैसे रोका जा सकता है? पवित्रता-अपवित्रता के मापदण्ड का क्षेत्र बहुत विस्तृत है, उस पर कई ग्रंथ लिखे जा सकते हैं परन्तु लेख की सीमाओं को ध्यान में रखकर यहाँ केवल रिश्तों की पवित्रता-अपवित्रता पर चर्चा की गई है। पवित्र रिश्तों की ओट लेकर, पवित्र रिश्तों को काम-वासना से रंगकर किए जाने वाले घिनौने कर्मों की ओर ध्यान खिंचवाया गया है। धार्मिक व पौराणिक साहित्य में वर्णित स्त्री-पुरुषों के पारस्परिक संबंधों की भी थोड़ी विवेचना है क्योंकि, कहा जाता है – ' महापुरुषा येन गता स पन्था:' अर्थात् महापुरुष जिस रास्ते से जाते हैं वही सही पथ है परन्तु यदि महापुरुषों को ही गलत रास्ते से जाते हुए दिखा दिया जाये या उनके उठे कदमों की सही, चरित्र की कसौटी पर खरी उतरने वाली व्याख्या न की जाये तो आने वाली पीढ़ी के लिए आदर्श कहाँ बच पाता है?

1. आदर्श माने गये महापुरुषों के रिश्ते – उदाहरण के लिए महाभारत में द्रौपदी के पाँच पति दिखाये हैं। सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर अर्जुन, द्रौपदी को वरने के बाद सभी भाइयों व द्रौपदी सहित माता कुन्ती के पास पहुँचे। सत्यवादी युधिष्ठिर ने कहा कि माँ देखो, हम क्या लाये हैं? माता कुन्ती ने बिना देखे कहा कि आपस में बराबर-बराबर बाँट लो। इस प्रकार

द्रौपदी, पाँचों भाइयों, जो देवपुत्र थे, की पत्नी बन गई।

प्रश्न उत्पन्न होता है कि जहाँ सत्यवादी युधिष्ठिर उपस्थित थे तो क्या वह अपनी माँ को सत्य दर्शन नहीं करा सकते थे कि माँ, यह बाँटने की चीज़ नहीं, यह तो अर्जुन की पत्नी द्रौपदी है? क्या अर्जुन इतना कमज़ोर था कि वह यह भी न कह सका कि द्रौपदी को उस अकेले ने वरा है, इसलिए बँटवारा नहीं हो सकता? क्या द्रौपदी इस घटना में चुप और मूकदर्शक बनने के अलावा कोई अन्य समाधान रूपी कदम नहीं उठा सकती थी?

माँ को कम से कम सत्य के दर्शन करवाना एक स्वाभाविक अनिवार्यता थी जो पूरी नहीं की गई। अत: महाभारत ग्रंथ का यह अंश गपोड़ा-सा प्रतीत होता है। इतना ही नहीं, द्रौपदी के पाँच पति दर्शाकर भारत में स्त्री-पुरुष के पवित्र रिश्तों को चोट पहुँचाई गई हैं। महापुरुषों व धर्म के प्रतीक लोगों को ऐसे रिश्तों में बंधा दिखाकर भारत के लोगों को अप्रत्यक्ष रूप में अपवित्र बनाने का महत्त्वपूर्ण कारण बना दिया गया। स्त्रियों के जनमानस पर देवी-देवता कहलाने वाले या पूज्यनीय समझे जाने वाले लोगों के ऐसे चरित्रों द्वारा यह छाप छोड़ दी गई कि एक स्त्री कई पुरुषों से यौन संबंध बनाकर भी वेश्या नहीं कहलायेगी। अत: यह पथभ्रष्ट होने की प्रेरणा पुरुष व स्त्री दोनों को मिलती रही है।

इस घटना में माँ की बात के प्रति पुत्रों की आज्ञाकारिता, सम्मान और उसे निर्विवाद रूप से स्वीकार करने की सुन्दर भावना तो प्रकट होती है। माता का सम्मान तो बढ़ गया। माँ के प्रति सम्मान की भावना को बल मिला परन्तु एक पतिव्रत की भावना को तार-तार कर दिया गया। कालान्तर में पति के भाइयों को निजी भाइयों जैसा समझने की दृष्टि ही विलुप्त होने लगी। **द्रौपदी का आध्यात्मिक अर्थ है ध्रुव पद (अटल पद)। पाँचों भाइयों ने आध्यात्मिक पुरुषार्थ द्वारा समान ध्रुवपद को प्राप्त किया। इस आध्यात्मिक अर्थ में इसे समझने से समाज नारी के प्रति छोटी भावना रखने से बच सकता था परन्तु इस अर्थ में, घटना को प्रचारित ही नहीं किया गया।**

2. देवर-भाभी का रिश्ता – भारत में, पति के छोटे भाई से देवर अर्थात् दूसरे वर का रिश्ता दे दिया गया। जब पति जीवित है तो दूसरा वर (देवर) साथ में क्यों? पति दिवंगत होने पर जिससे पुनर्विवाह होता है उसे दूजबर की संज्ञा दी जाती है परन्तु पति के रहते पत्नी के लिए देवर (दूजा वर) बना देना अपवित्र रिश्ते को जन्म देना है। देवर के स्थान पर ऐसा नाम दिया जाना चाहिए था जिससे पवित्रता की भासना आए जैसे अंग्रेजी भाषा में कानूनन भाई *(Brother-in-Law)* दिया गया है। इसी प्रकार, भारत में भी 'देवर' के स्थान पर 'दे भाई' नाम दिया जा सकता था। यदि ऐसा किया जाता तो देवर-भाभी के रिश्ते को कलंकित करने वाली निकृष्ट भावनाओं को वैध समझने की गलती से भारतीय समाज बच सकता था।

भाभी अर्थात् बड़े भाई की पत्नी (भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोष)। परन्तु देवर की वह रिश्ते में क्या लगती है, यह रिश्ता प्रत्यक्ष नहीं बनाया गया। यहाँ भी रिश्ता 'दूजी बहन' या 'सिस्टर इन ला' आदि होना चाहिए था। जैसा रिश्ता वैसा व्यवहार। पवित्र नाम न दिये जाने के कारण अपवित्रता की गुंजाइश छोड़ दी गई।

3. जीजा-साली का रिश्ता – भारत में यह रिश्ता भी पवित्र नहीं समझा व बनाया गया है। फिल्मों में, टेलीविजन आदि में खुले आम बोलकर कहा जाता है, साली-आधी घरवाली। इस पर गाने भी बना दिये गये। फिर यह रिश्ता कैसे पवित्र रह सकता है क्योंकि इसकी नींव ही अपवित्रता पर आधारित है।

मेरा व्यक्तिगत अनुभव है कि एक बार मेरी एक साली मुझसे अश्लील बातें करने लग गई। मैंने पूछा कि आपका मेरे से क्या रिश्ता है? उसने कहा, जीजा-साली का। मैंने फिर पूछा, साली का क्या अर्थ

है? इस पर उसने बताया कि साली अर्थात् आधी घरवाली। मैंने कहा, यह गलत है क्योंकि साली माना सिस्टर इन ला। तुम कानून में बहन लगती हो। यह इसलिए हुआ क्योंकि मैंने ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त कर रखा है, नहीं तो मैं भी उसके साथ अपवित्रता में सम्मिलित हो सकता था। इतना ही नहीं, एक लड़का जब किसी गाँव की एक लड़की से शादी कर लेता है तो वह गाँव की सभी लड़कियों को अपनी साली अर्थात् आधी घरवाली समझने लगता है। अंग्रेजी भाषा के अनुसार इस रिश्ते के लिए 'ब्रदर इन ला' और 'सिस्टर इन ला' शब्द हैं जो कि अधिक पवित्र हैं और रिश्तों में भाई-बहन की तरह मर्यादित रहने का वातावरण बनाते हैं।

4. साढू-साढू का रिश्ता – दो बहनों के पतियों का आपसी रिश्ता साढू का रिश्ता कहलाता है। 'साढू' शब्द सांड से निकला है जिसका भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोष के अनुसार अर्थ है, कुकर्मी। अब कुकर्मी से तो बचकर रहने की आवश्यकता है। रिश्ते को नाम ही गलत दे दिया गया है तो व्यवहार भी वैसा ही होगा जबकि इस रिश्ते के लिए भी तीजा भाई या कोई और पवित्र नाम होना चाहिये था। अंग्रेजी में इस रिश्ते का नाम 'ब्रदर इन ला' है जो कि पवित्रता पर आधारित है।

5. बहू-ससुर का रिश्ता – बहू अर्थात् पुत्र की पत्नी। बहू व ससुर के रिश्ते को भी प्रत्यक्ष संबंध का रिश्ता नहीं दिया गया। भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोष के अनुसार ससुर का अर्थ पति का पिता होता है। परन्तु पत्नी का पति के पिता से सीधा रिश्ता पिता का है या चाचा का है या कुछ और है, यह परिभाषित नहीं किया गया। यह रिश्ता भी खुला छोड़ दिया गया। इसी कारण बहू-ससुर का संबंध भी कुछ हद तक पवित्र नहीं रह सका। ससुर का बहू से यौन संबंध या यौन शोषण की दुर्घटनाएँ भारतीय समाज में कम सुनने को नहीं मिलती हैं।

प्राकृतिक तौर पर बहू-ससुर का रिश्ता, पुत्री-पिता का पवित्र रिश्ता होना चाहिए था। अंग्रेजी भाषा में इस रिश्ते को 'डॉटर इन ला' व 'फादर इन ला' का नाम दिया गया जो पवित्रता की भासना देता है। 'कानूनन पिता' व 'कानूनन पुत्री' ये शब्द मन में पवित्र दृश्य उपस्थित करते हैं।

6. शिक्षक और विद्यार्थी का रिश्ता – भारत में यह एक बहुत ही पवित्र तथा विश्वसनीय रिश्ता रहा है। शिक्षक विद्यार्थियों के लिए आदर्श व आदरणीय होता है। आज का शिक्षक बिना नैतिक व आध्यात्मिक संस्कारों के केवल सांसारिक पढ़ाई पढ़कर शिक्षक बन जाता है। उसकी चरित्रहीनता को विद्यार्थी देखते हैं तथा तदानुसार प्रभावित होते हैं।

7. गर्ल फ्रेंड व बॉय फ्रेंड का रिश्ता – फ्रेंड का रिश्ता एक-दूसरे को सही मार्गदर्शन देने, ज़रूरत पड़ने पर एक-दूसरे की मदद करने आदि के लिए बना है, न कि यौन-उत्पीड़न व यौन शोषण के लिए।

इस कड़ी में अन्य भी बहुत से पौराणिक और धार्मिक ग्रंथों के देव-तुल्य समझे जाने वाले पात्रों के नाम वर्णित हो सकते हैं। देवता नाम देकर उन्हें काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या आदि विकारों से ग्रसित दिखाया गया है जिस कारण समाज के सामने कोई आदर्श नहीं बचा। इक्का-दुक्का बेदाग चरित्र भी हैं परन्तु बहुमत के प्रभाव में इक्का, दुक्का चरित्र छिप जाते हैं। समय की माँग है कि हम अपने पौराणिक पात्रों को विकारों और विकृतियों के दाग-धब्बों से मुक्त करें। उन्हें उनके उजले और वास्तविक स्वरूप में स्वीकार भी करें और उनका अनुसरण करके खुद भी सच्चरित्र बनें तभी कल्याण हो सकता है। घर-परिवार-समाज में भी रिश्तों को नई और उजली परिभाषाएँ दें ताकि व्यक्ति की व्यक्ति के प्रति शंका-कुशंका का शमन किया जा सके और सभी रिश्तों को निभाते हुए, सभी के प्रति पवित्रता की गरिमा बनी रहे।

(क्रमशः)

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन -307510, आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया। संयुक्त सम्पादिका - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन
E-mail : omshantipress@bkivv.org Ph. No. : (02974) - 228125 worldrenewal@bkivv.org